भारतीय ज्ञान परंपरा पाठ्यक्रम का शीर्षक योग एवं ध्यान

BY-
DR SHAILENDRA KUMAR SHRIVASTAVA
PROFESSOR
GOVT SCIENCE COLLEGE JABALPUR MP

पाठ्यक्रम का शीर्षक योग एवं ध्यान

इकाई वन-- योग और यौगिक अभ्यास ओं का परिचय

योग-- विपत्ति व्युत्पत्ति परिभाषाएं उद्देश्य और गलत धारणाएं

योग-- इसकी उत्पत्ति इतिहास और विकास

योग--- अभ्यासकर्ताओं द्वारा पालन किए जाने वाले नियम और विनियम योग प्रथाओं का परिचय

षष्ठकर्म--- योग साधना में अर्थ उद्देश्य और उनका महत्व

योग शिथिलीकरण और सूर्य नमस्कार का परिचय

पाठ्यक्रम का शीर्षक योग एवं ध्यान

इकाई 2--- स्वास अभ्यास और प्राणायाम

अनु भाग्य स्वास पेठ थोरेसिक क्लियर कलर

योगिक गहरी सांस

पूरक रेचक और कुंभक की अवधारणा

बंध और मुद्रा की अवधारणा

अनुलोम-विलोम नाड़ी शोधन

शीतली एवं भावरी प्राणायाम

पाठ्यक्रम का शीर्षक योग एवं ध्यान

इकाई 3- ध्यान अभ्यास

प्रणव मंत्र का पाठ

मंत्रों का पाठ मंगलाचरण और प्रार्थना में

अंतरमोन

स्वास ध्यान

ओम ध्यान

योग : इसकी उत्पत्ति, इतिहास एव विकास

परिचय : योग तत्वत: बहुत सूक्ष्म विज्ञान पर आधारित एक आध्यात्मि विषय है जो मन एवं शरीर के बीच सामंजस्य स्थापित करने पर ध्यान देता है। यह स्वस्थ जीवनयापन की कला एवं विज्ञान है। योग शब्द संस्कृत की युज धातु से बना है जिसका अर्थ जुड़ना या एकजुट होना या शामिल होना है। योग से जुड़े ग्रंथों के अनुसार योग करने से व्यक्ति की चेतना ब्रह्मांड की चेतना से जुड़ जाती है जो मन एवं शरीर, मानव एवं प्रकृति के बीच परिपूर्ण सामंजस्य का द्योतक है। इस प्रकार, योग का लक्ष्य आत्म-अनुभूति, सभी प्रकार के कष्टों से निजात पाना है जिससे मोक्ष की अवस्था या कैवल्य की अवस्था प्राप्त होती है। जीवन के हर क्षेत्र में आजादी के साथ जीवन - यापन करना, स्वास्थ्य एवं सामंजस्य योग करने के प्रमुख उद्देश्य होंगे। योग का अभिप्राय एक आंतरिक विज्ञान से भी है जिसमें कई तरह की विधियां शामिल होती हैं जिनके माध्यम से मानव इस एकता को साकार कर सकता है और अपनी नियति को अपने वश में कर सकता है। चूंकि योग को बड़े पैमाने पर सिंधु - सरस्वती घाटी सभ्यता, जिसका इतिहास 2700 ईसा पूर्व से है, के अमर सांस्कृतिक परिणाम के रूप में बड़े पैमाने पर माना जाता है, इसलिए इसने साबित किया है कि यह मानवता के भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों तरह के उत्थान को संभव बनाता है। बुनियादी मानवीय मूल्य योग साधना की पहचान हैं।

योग का संक्षिप्त इतिहास एवं विकास:

ऐसा माना जाता है कि जब से सभ्यता शुरू हुई है तभी से योग किया जा रहा है। योग के विज्ञान की उत्पत्ति हजारों साल पहले हुई थी, पहले धर्मों या आस्था के जन्म लेने से काफी पहले हुई थी। योग विद्या में शिव को पहले योगी या आदि योगी तथा पहले गुरू या आदि गुरू के रूप में माना जाता है। योग करते हुए पित्रों के साथ सिंधु - सरस्वती घाटी सभ्यता के अनेक जीवाश्म अवशेष एवं मुहरें भारत में योग की मौजूदगी का सुझाव देती हैं। देवी मां की मूर्तियों की मुहरें, लैंगिक प्रतीक तंत्र योग का सुझाव देते हैं। लोक परंपराओं, सिंधु घाटी सभ्यता, वैदिक एवं उपनिषद की विरासत, बौद्ध एवं जैन परंपराओं, दर्शनों, महाभारत एवं रामायण नामक महाकाव्यों, शैवों, वैष्णवों की आस्तिक परंपराओं एवं तांत्रिक परंपराओं में योग की मौजूदगी है। इसके अलावा, एक आदि या शुद्ध योग था जो दक्षिण एशिया की रहस्यवादी परंपराओं में अभिव्यक्त हुआ है। यह समय ऐसा था जब योग गुरू के सीधे मार्गदर्शन में किया जाता था तथा इसके आध्यात्मिक मूल्य को विशेष महत्व दिया जाता था। यह उपासना का अंग था तथा योग साधना उनके संस्कारों में रचा-बसा था। वैदिक काल के दौरान सूर्य को सबसे अधिक महत्व दिया गया। हो सकता है कि इस प्रभाव की वजह से आगे चलकर 'सूर्य नमस्कार' की प्रथा का आविष्कार किया गया हो। प्राणायाम दैनिक संस्कार का हिस्सा था तथा यह समर्पण के लिए किया जाता था। हालांकि पूर्व वैदिक काल में योग किया जाता था, महान संत महर्षि पतंजलि ने अपने योग सूत्रों के माध्यम से उस समय विद्यमान योग की प्रथाओं, इसके आशय एवं इससे संबंधित ज्ञान को व्यवस्थित एवं कूटबद्ध किया। पतंजलि के बाद, अनेक ऋषियों एवं योगाचार्यों ने अच्छी तरह प्रलेखित अपनी प्रथाओं एवं साहित्य के माध्यम से योग के परिरक्षण एवं विकास में काफी योगदान दिया।

योग का संक्षिप्त इतिहास एवं विकास

पूर्व वैदिक काल (2700 ईसा पूर्व) में एवं इसके बाद पतंजलि काल तक योग की मौजूदगी के ऐतिहासिक साक्ष्य देखे गए। मुख्य स्रोत, जिनसे हम इस अवधि के दौरान योग की प्रथाओं तथा संबंधित साहित्य के बारे में सूचना प्राप्त करते हैं, वेदों (4), उपनिषदों (18), स्मृतियों, बौद्ध धर्म, जैन धर्म, पाणिनी, महाकाव्यों (2) के उपदेशों, पुराणों (18) आदि में उपलब्ध हैं।

अनंतिम रूप से 500 ईसा पूर्व - 800 ईस्वी सन के बीच की अवधि को श्रेष्ठ अवधि के रूप में माना जाता है जिसे योग के इतिहास एवं विकास में सबसे उर्वर एवं महत्वपूर्ण अवधि के रूप में भी माना जाता है। इस अवधि के दौरान, योग सूत्रों एवं भागवद्गीता आदि पर व्यास के टीकाएं अस्तित्व में आईं। इस अवधि को मुख्य रूप से भारत के दो महान धार्मिक उपदेशकों - महावीर एवं बुद्ध को समर्पित किया जा सकता है। महावीर द्वारा पांच महान व्रतों - पंच महाव्रतों एवं बुद्ध द्वारा अष्ठ मग्गा या आठ पथ की संकल्पना - को योग साधना की शुरूआती प्रकृति के रूप में माना जा सकता है। हमें भागवद्गीता में इसका अधिक स्पष्ट स्पष्टीकरण प्राप्त होता है जिसमें ज्ञान योग, भक्ति योग और कर्म योग की संकल्पना को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है। तीन प्रकार के ये योग आज भी मानव की बुद्धिमत्ता के सर्वोच्च उदाहरण हैं तथा आज भी गीता में प्रदर्शित विधियों का अनुसरण करके लागों को शांति मिलती है। पतंजलि के योग सूत्र में न केवल योग के विभिन्न घटक हैं, अपितु मुख्य रूप से इसकी पहचान योग के आठ मार्गों से होती है

योग का संक्षिप्त इतिहास एवं विकास

यास द्वारा योग सूत्र पर बहुत महत्वपूर्ण टीका भी लिखी गई। इसी अवधि के दौरान मन को महत्व दिया गया तथा योग साधना के माध्यम से स्पष्ट से बताया गया कि समभाव का अनुभव करने के लिए मन एवं शरीर दोनों को नियंत्रित किया जा सकता है। 800 ईसवी - 1700 ईसवीं के बीच की अवधि को उत्कृष्ट अवधि के बाद की अवधि के रूप में माना जाता है जिसमें महन आचार्यत्रयों - आदि शंकराचार्य, रामानुजाचार्य और माधवाचार्य - के उपदेश इस अवधि के दौरान प्रमुख थे। इस अवधि के दौरान सुदर्शन, तुलसी दास, पुरंदर दास, मीराबाई के उपदेशों ने महान योगदान दिया। हठयोग परंपरा के नाथ योगी जैसे कि मत्स्येंद्र नाथ, गोरख नाथ, गौरांगी नाथ, स्वात्माराम सूरी, घेरांडा, श्रीनिवास भट्ट ऐसी कुछ महान हस्तियां हैं जिन्होंने इस अवधि के दौरान हठ योग की परंपरा को लोकप्रिय बनाया।

1700 - 1900 ईसवी के बीच की अवधि को आधुनिक काल के रूप में माना जाता है जिसमें महान योगाचार्यों - रमन महर्षि, रामकृष्ण परमहंस, परमहंस योगानंद, विवेकानंद आदि ने राज योग के विकास में योगदान दिया है। यह ऐसी अवधि है जिसमें वेदांत, भक्ति योग, नाथ योग या हठ योग फला - फूला। शादंगा - गोरक्ष शतकम का योग, चतुरंगा - हठयोग प्रदीपिका का योग, सप्तंगा - घेरांडा संहिता का योग - हठ योग के मुख्य जड़सूत्र थे।

अब समकालीन युग में स्वास्थ्य के परिरक्षण, अनुरक्षण और संवर्धन के लिए योग में हर किसी की आस्था है। स्वमी विवेकानंद, श्री टी कृष्णमचार्य, स्वामी कुवालयनंदा, श्री योगेंद्र, स्वामी राम, श्री अरविंदो, महर्षि महेश योगी, आचार्य रंजनीश, पट्टाभिजोइस, बी के एस आयंगर, स्वामी सत्येंद्र सरस्वती आदि जैसी महान हस्तियों के उपदेशों से आज योग पूरी दुनिया में फैल गया है।

भ्रातियों को दूर करना :

कई लोगों के लिए योग का अर्थ हठ योग एवं आसनों तक सीमित है। तथापि, योग सूत्रों में केवल तीन सूत्रों में आसनों का वर्णन आता है। मौलिक रूप से हठ योग तैयारी प्रक्रिया है जिससे कि शरीर ऊर्जा के उच्च स्तर को बर्दाश्त कर सके। प्रक्रिया शरीर से शुरू होती है फिर श्वसन, मन और अंतरतम की बारी आती है।

आम तौर पर योग को स्वास्थ्य एवं फिटनेस के लिए थिरेपी या व्यायाम की पद्धति के रूप में समझा जाता है। हालांकि शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य योग के स्वाभाविक परिणाम हैं, परंतु योग का लक्ष्य अधिक दूरगामी है। "योग ब्रह्माण्ड से स्वयं का सामंजस्य स्थापित करने के बारे में है। यह सर्वोच्च स्तर की अनुभूति एवं सामंजस्य प्राप्त करने के लिए ब्रह्माण्ड से स्वयं की ज्यामिती को संरेखित करने की कला है।

योग किसी खास धर्म, आस्था पद्धति या समुदाय के मुताबिक नहीं चलता है; इसे सदैव अंतरतम की सेहत के लिए कला के रूप में देखा गया है। जो कोई भी तल्लीनता के साथ योग करता है वह इसके लाभ प्राप्त कर सकता है, उसका धर्म, जाति या संस्कृति जो भी हो। योग की परंपरागत शैलियां :

भ्रांतियों को दूर करना :

योग के ये भिन्न - भिन्न दर्शन, परंपराएं, वंशावली तथा गुरू - शिष्य परंपराएं योग की ये भिन्न - भिन्न परंपरागत शैलियों के उद्भव का मार्ग प्रशस्त करती हैं, उदाहरण के लिए ज्ञान योग, भक्ति योग, कर्म योग, ध्यान योग, पतंजलि योग, कुंडलिनी योग, हठ योग, मंत्र योग, लय योग, राज योग, जैन योग, बुद्ध योग आदि। हर शैली के अपने स्वयं के सिद्धांत एवं पद्धतियां हैं जो योग के परम लक्ष्य एवं उद्देश्यों की ओर ले जाती हैं।

स्वास्थ्य एवं तंदरूस्ती के लिए योग की पद्धतियां : वड़े पैमाने पर की जाने वाली योग साधनाएं इस प्रकार हैं : यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि / साम्यामा, बंध एवं मुद्राएं, षटकर्म, युक्त आहार, युक्त कर्म, मंत्र जप आदि। यम अंकुश हैं तथा नियम आचार हैं। इनको योग साधना के लिए पहली आवश्यकता के रूप में माना जाता है। आसन, शरीर एवं मन की स्थिरता लाने में सक्षम 'कर्यात तद आसनं स्थैर्यम...' के तहत काफी लंबी अवधि तक शरीर (मानसिक - शारीरिक) के विभिन्न पैटर्न को अपनाना, शरीर की मुद्रा बनाए रखने की सामर्थ्य प्रदान करना (अपने संरचनात्मक अस्तित्व की स्थिर चेतना) शामिल है।

भ्रांतियों को दूर करना :

प्राणायाम के तहत अपने श्वसन की जागरूकता पैदा करना और अपने अस्तित्व के प्रकार्यात्मक या महत्वपूर्ण आधार के रूप में श्वसन को अपनी इच्छा से विनियमित करना शामिल है। यह अपने मन की चेतना को विकसित करने में मदद करता है तथा मन पर नियंत्रण रखने में भी मदद करता है। शुरूआती चरणों में, यह नासिकाओं, मुंह तथा शरीर के अन्य द्वारों, इसके आंतरिक एवं बाहरी मार्गों तथा गंतव्यों के माध्यम से श्वास - प्रश्वास की जागरूकता पैदा करके किया जाता है। आगे चलकर, विनियमित, नियंत्रित एवं पर्यवेक्षित श्वास के माध्यम से इस परिदृश्य को संशोधित किया जाता है जिससे यह जागरूकता पैदा होती है कि शरीर के स्थान भर रहे हैं (पूरक), स्थान भरी हुई अवस्था में बने हुए हैं (कुंभक) और विनियमित, नियंत्रित एवं पर्यवेक्षित प्रश्वास के दौरान यह खाली हो रहा है (रेचक)।

भ्रांतियों को दूर करना :

प्रत्याहार ज्ञानेंद्रियों से अपनी चेतना को अलग करने का प्रतीक है, जो बाहरी वस्तुओं से जुड़े रहने में हमारी मदद करती हैं। धारणा ध्यान (शरीर एवं मन के अंदर) के विस्तृत क्षेत्र का द्योतक है, जिसे अक्सर संकेंद्रण के रूप में समझा जाता है। ध्यान शरीर एवं मन के अंदर अपने आप को केंद्रित करना है और समाधि - एकीकरण।

बंध और मुद्राएं प्राणायाम से संबद्ध साधनाएं हैं। इनको योग की उच्चतर साधना के रूप में देखा जाता है क्योंकि इनमें मुख्य रूप से श्वसन पर नियंत्रण के साथ शरीर (शारीरिक - मानसिक) की कतिपय पद्धतियों को अपनाना शामिल है। इससे मन पर नियंत्रण और सुगम हो जाता है तथा योग की उच्चतर सिद्धि का मार्ग प्रशस्त होता है। षटकर्म विषाक्तता दूर करने की प्रक्रियाएं हैं तथा शरीर में संचित विष को निकालने में मदद करते हैं और ये नैदानिक स्वरूप के हैं।

युक्ताहार (सही भोजन एवं अन्य इनपुट) स्वस्थ जीवन के लिए उपयुक्त आहार एवं खान-पान की आदतों की वकालत करता है। तथापि, आत्मानुभूति, जिसे उत्कर्ष का मार्ग प्रशस्त होता है, में मदद करने वाली ध्यान की साधना को योग साधना के सार के रूप में माना जाता है।

योग साधना की मौलिक बातें :

योग हमारे शरीर, मन, भावना एवं ऊर्जा के स्तर पर काम करता है। इसकी वजह से मोटेतौर पर योग को चार भागों में बांटा गया है : कर्मयोग, जहां हम अपने शरीर का उपयोग करते हैं; भक्तियोग, जहां हम अपनी भावनाओं का उपयोग करते हैं; ज्ञानयोग, जहां हम मन एवं बुद्धि का प्रयोग करते हैं और क्रियायोग, जहां हम अपनी ऊर्जा का उपयोग करते हैं।

हम योग साधना की जिस किसी पद्धति का उपयोग करें, वे इन श्रेणियों में से किसी एक श्रेणी या अधिक श्रेणियों के तहत आती हैं। हर व्यक्ति इन चार कारकों का एक अनोखा संयोग होता है। "योग पर सभी प्राचीन टीकाओं में इस बात पर जोर दिया गया है कि किसी गुरू के मार्गदर्शन में काम करना आवश्यक है।" इसका कारण यह है कि गुरू चार मौलिक मार्गों का उपयुक्त संयोजन तैयार कर सकता है जो हर साधक के लिए आवश्यक होता है। योग शिक्षा : परंपरागत रूप से, परिवारों में ज्ञानी, अनुभवी एवं बुद्धिमान व्यक्तियों द्वारा (पश्चिम में कंवेंट में प्रदान की जानी वाली शिक्षा से इसकी तुलना की जा सकती है) और फिर आश्रमों में (जिसकी तुलना मठों से की जा सकती है) ऋषियों / मुनियों / आचार्यों द्वारा योग की शिक्षा प्रदान की जाती थी। दूसरी ओर, योग की शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति, अस्तित्व का ध्यान रखना है। ऐसा माना जाता है कि अच्छा, संतुलित, एकीकृत, सच पर चलने वाला, स्वच्छ, पारदर्शी व्यक्ति अपने लिए, परिवार, समाज, राष्ट्र, प्रकृति और पूरी मानवता के लिए अधिक उपयोगी होगा। योग की शिक्षा स्व की शिक्षा है। विभिन्न जीवंत परंपराओं तथा पाठों एवं विधियों में स्व के साथ काम करने के व्यौरों को रेखांकित किया गया है जो इस महत्वपूर्ण क्षेत्र में योगदान कर रहे हैं जिसे योग के नाम से जाना जाता है

योग साधना की मौलिक बातें

आजकल, योग की शिक्षा अनेक अशंहर योग संस्थाओं, योग विश्वविद्यालयों, योग कालेजों, विश्वविद्यालयों के योग विभागों, प्राकृतिक चिकित्सा कालेजों तथा निजी न्यासों एवं समितियों द्वारा प्रदान की जा रही है। अस्पतालों, औषधालयों, चिकित्सा संस्थाओं तथा रोगहर स्थापनाओं में अनेक योग क्लीनिक, योग थेरेपी और योग प्रशिक्षण केंद्र, योग की निवारक स्वास्थ्य देख-रेख यूनिटें, योग अनुसंधान केंद्र आदि स्थापित किए गए हैं।

योग की धरती भारत में विभिन्न सामाजिक रीति-रिवाज एवं अनुष्ठान पारिस्थितिकी संतुलन, दूसरों की चिंतन पद्धति के लिए सहिष्णुता तथा सभी प्राणियों के लिए सहानुभूति के लिए प्रेम प्रदर्शित करते हैं। सभी प्रकार की योग साधना को सार्थक जीवन एवं जीवन-यापन के लिए रामबाण माना जाता है। व्यापक स्वास्थ्य, सामाजिक एवं व्यक्तिगत दोनों, के लिए इसका प्रबोधन सभी धर्मों, नस्लों एवं राष्ट्रीयताओं के लोगों के लिए इसके अभ्यास को उपयोगी बनाता है।

योगअभ्यास के लिए सामान्य दिशानिर्देश

अभ्यास से पूर्व

योगाभ्यास करते समय योग के अभ्यासी को नीचे दिए गए दिशा निर्देशों एवं सिद्धांतों का पालन अवश्य करना चाहिए :

शौच - शौच का अर्थ है शोधन , जो योग अभ्यास के लिए यह एक महत्वपूर्ण एवं पूर्व अपेक्षित क्रिया है। इसके अन्तर्गत आस पास का वातावरण, शरीर एवं मन की शुद्धि की जाती है। योग का अभ्यास शांत वातावरण में आराम के साथ शरीर एवं मन को शिथिल करके किया जाना चाहिए।
योग अभ्यास करते समय खाली पेट अथवा अल्पाहार लेकर करना चाहिए। यदि अभ्यास के समय कमजोरी महसूस करें तो गुनगुने जल में थोड़ी सी शहद मिलाकर लेना चाहिए।
योग अभ्यास मल एवं मूत्र का विसर्जन करने के उपरान्त प्रारम्भ करना चाहिए।
अभ्यास करने के लिए चटाई, दरी, कंबल अथवा योग मैट का प्रयोग करना चाहिए।
अभ्यास करते समय शरीर की गतिविधि आसानी से हो, इसके लिए हल्के सूती और आरामदायक वस्त्रों को प्राथमिकता के साथ धारण करना चाहिए।
थकावट, बीमारी, जल्दबाज़ी एवं तनाव की स्थितियों में योग नहीं करना चाहिए।
यदि पुराने रोग, पीड़ा एवं हृदय संबंधी समस्याएं है तो ऐसी स्थिति में योग अभ्यास शुरू करने के पूर्व चिकित्सक अथवा
योग विशेषज्ञ से परामर्श लेना चाहिए।
गर्भावस्था एवं मासिक धर्म के समय योग करने से पहले योग विशेषज्ञ से पराम र्श किया जाना चाहिए।

योगअभ्यास के लिए सामान्य दिशानिर्देश

अभ्यास के समय

अभ्यास सत्र किसी प्रार्थना अथवा स्तुति से प्रारम्भ करना चाहिए। क्योंकि प्रार्थना अथवा स्तुति मन एवं मस्तिष्क को शिथिल करने के लिए शान्त वातावरण निर्मित करते हैं।
योग अभ्यासों को आरामदायक स्थिति में शरीर एवं श्वास प्रश्वास की सजगकता के साथ धीरे-धीरे प्रारम्भ करना चाहिए।
अभ्यास के समय श्वास प्र श्वास की गति नही रोकनी चाहिए, जब तक कि आपको ऐसा करने के लिए विशेषरूप से कहा न जाए।
श्वास प्रश्वास सदैव नासारन्ध्रों से ही लेना चाहिए, जब तक कि आपको अन्य विधि से श् वास प्रश् वास लेने के लिए कहा न जाए।
अभ्यास के समय शरीर को शिथिल रखें, किसी प्रकार का झटका प्रदान नहीं करें।
अपनी शारीरिक एवं मानसिक क्षमता के अनुसार ही योग अभ्यास करना चाहिए।
अभ्यास के अच्छे परिणाम आने में कुछ समय लगता है, इसलिए लगातार और नियमित अभ्यास बहुत आवश्यक है।
प्रत्येक योग अभ्यास के लिए ध्यातव्य निर्दे श एवं सावधानियां तथा सीमाएं होती हैं। ऐसे ध्यातव्य निर्देश को सदैव अपने मन में रखना चाहिए।
योग सत्र का समापन सदैव ध्यान एवं गहन मौन तथा शांति पाठ से करना चाहिए।

योगअभ्यास के लिए सामान्य दिशानिर्देश

अभ्यास के बाद

अभ्यास के 20-30 मिनट के बाद स्नान करना चाहिए।

अभ्यास के 20-30 मिनट बाद ही आहार ग्रहण करना चाहिए।

विचार के लिए भोजन

आहार संबंधी कुछ दिशा निर्देश

आप इस बात को सुनिश्चित कर सकते हैं कि अभ्यास के लिए शरीर एवं मन ठीक प्रकार से तैयार हैं। अभ्यास के बाद आम तौर पर शाकाहारी आहार ग्रहण करना श्रेयस्कर माना जाता है। 30 वर्ष की आयु से ऊपर के व्यक्ति के लिए बीमारी या अत्यधिक शारीरिक कार्य अथवा श्रम की स्थिति को छोड़कर एक दिन में दो बार भोजन ग्रहण करना पर्याप्त होता है।

योग किस प्रकार सहायता कर सकता है

योग निश्चित रूप से सभी प्रकार के बंधनों से मुक्ति प्राप्त करने की साधन है। वर्तमान समय में हुए चिकित्सा शोधों ने योग से होने वाले कई शारीरिक और मानसिक लाभों के रहस्य प्रकट किए हैं। साथ ही साथ योग के लाखों अभ्यासियों के अनुभव के आधार पर इस बात की पुष्टि की जा सकती है कि योग किस प्रकार सहायता कर सकता है।

योग शारीरिक स्वास्थ्य, स्नायुतन्त्र एवं कंकालतन्त्र के कार्य करने और हृदय तथा नाडियों के स्वास्थ्य के लिए हितकर अभ्यास है।

यह मधुमेह, श्वसन संबधी विकार, उच्च रक्तचाप, निम्न रक्तचाप और जीवन शैली संबंधी कई प्रकार के विकारों के प्रबंधन में लाभकर है।

योग अवसाद, थकान, चिंता संबंधी विकार और तनाव को कम करने में सहायक है।

योग मासिक धर्म को नियमित बनाता है।

संक्षेप में यदि यह कहा जाए कि योग शरीर एवं मन के निर्माण की ऐसी प्रक्रिया है, जो समृद्ध और परिपूर्ण जीवन की उन्नति का मार्ग है, न कि जीवन के अवरोध का।

'षट्कर्म' शब्द में दो शब्दों का मेल है षट्+कर्म। षट् का अर्थ है छह (6) तथा कर्म का अर्थ है क्रिया। छह क्रियाओं के समुदाय को षट्कर्म कहा जाता है। यें छह क्रियाएँ योग में शरीर शोधन हेतु प्रयोग में लाई जाती है। **इसलिए इन्हें षट्कर्म शब्द या शरीर शोधन की छह क्रियाओं के अर्थ में 'शोधनक्रिया' नाम से कहा जाता है**।

षटकर्मो के नाम - **धौति, वस्ति, नेति, त्राटक, नौलि व कपालभाति** है।

आन्तरिक मलों की शुद्धि तथा नाड़ी शुद्धि के लिए जो उपाय किये जाते है हठयोग में उन्हें षटकर्मो के नाम से जाना जाता है।

अर्थात्- धौति, बस्ति, नेति, त्राटक, नौलि और कपालभाति ये छह कर्म हैं जिनके द्वारा शरीर की शुद्धि होती है।

नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः

बलहीन शरीर से आत्म साक्षात्कार सम्भव नहीं है। इसलिए शरीर में व्याधियों को उत्पन्न न होने देने और यदि व्याधि उत्पन्न हो गयी हो तो उसे दूर करने के लिए तथा शरीर को स्वस्थ व साधना योग्य बनाने के लिए हठयोगियों ने षटकर्मों का विधान किया है। यद्यपि महर्षि पतंजलि ने योगसूत्र में इनको शौच के अन्तर्गत रखा है। परन्तु समय और अनुभव ने हठयोगियों को सिखाया कि प्राणायाम आदि क्रियाओं से जितने समय में शरीर के मल दूर किये जाते हैं, उससे कम समय में षट्कर्मों द्वारा शरीर के मल दूर किये जा सकते हैं। इसलिए इन कर्मों की आवश्यकता को अनुभव करते हुए इनका विकास किया गया। इन षट्कर्मों का विधान इस प्रकार किया गया कि ये सम्पूर्ण शरीर की शुद्धि करने में समर्थ हो सके।

स्वामी चरणदास जी भी पहले षटकर्म करने के ही पक्ष में हैं। वे कहते हैं-
पहले ये सब साधिये, काया होवे शुद्धि।
रोग न लागे देह को, उज्ज्वल होवे बुद्धि (भक्तिसागर)

अर्थात् साधना में प्रथम षट्कर्मों का अभ्यास करना चाहिए क्योंकि इनके करने से शरीर शुद्ध हो जाता है। शरीर में कोई रोग नहीं रह पाता अर्थात् शरीर निरोग हो जाता है तथा बुद्धि भी प्रकाशमान् हो जाती है जिससे यथार्थ ज्ञान उत्पन्न होता है।

हठयोग साधना में षट्कर्मों का उद्देश्य यही है कि इनके द्वारा शरीर को स्वस्थ बनाएँ जिनसे साधना के अन्य अंगों का भी पूरा लाभ प्राप्त किया जा सके और साधनारत रहकर अपने चरमलक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

धौतिर्बस्तिस्तथा नेतिस्त्राटकं नौलिकं तथा।
कपालभातिश्चैतानि षटकर्माणि प्रचक्षते।। (हठयोगप्रदीपिका - 2/22)

अर्थात्- धौति, बस्ति, नेति, त्राटक, नौलि और कपालभाति ये छह कर्म हैं जिनके द्वारा शरीर की शुद्धि होती है। इस समस्त चराचर जगत् का उपादान कारण त्रिगुणात्मकप्रकृति होने से प्राणिमात्र के शरीर वात, पित्त और कफ इन तीन धातुओं के विभिन्न प्रकार के रूपान्तरों के सम्मिश्रण से बने हैं। इसीलिए किसी का शरीर वातप्रधान है, किसी का शरीर पित्तप्रधान और किसी का शरीर कफप्रधान होता है। वातप्रधान शरीर आहार-विहार के दोष से तथा देश कालादि के कारण वात कुपित हो जाता है। इसी कारण पित्तप्रधान शरीर में पित्त और कफ प्रधान शरीर में कफ प्रधान हो जाता है। इनके दूषित होने पर मेद, श्लैष्मा, पित्त वात आदि का शरीर में संग्रह हो जाता है, जिसके कुपित होने पर शरीर में विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। फलस्वरूप साधक साधना में संलग्न नहीं रह पाता क्योंकि स्वस्थ शरीर के अभाव में आध्यात्मिक लाभ भी प्राप्त नहीं होता। उपनिषदों में भी कहा है

षट्कर्मों की उपयोगिता-
Utility of the body cleansing process

मानव स्वास्थ्य की दृष्टि से षटकर्मों की अत्यधिक उपयोगिता है। षट्कर्मों के द्वारा शरीर के मलों व विषाक्त तत्वों को दूर किया जाता है। षट्कर्म शरीर की चपापचय क्रिया को नियन्त्रित व सुव्यवस्थित करते हैं। षटकर्मों की क्रियायें शरीर का कायाकल्प कर उसे रोगमुक्त, दीर्घायु व स्वस्थ करती हैं। हठयोग में वर्णित षट्कर्मो के अभ्यास से दीर्घकाल तक युवावस्था को बनाया रखा जा सकता है। इनके अभ्यास से नाक, कान, आँख, गले, फेफड़े, आमाशय व पूरी आहार नाल से सम्बन्धित रोगों को तो प्रत्यक्ष रूप से ही ठीक किया जा सकता है, लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से ये समस्त शरीर को प्रभावित करते हैं तथा शरीर को निरोगी बनाते हैं। हठयोग के ग्रन्थों में इनकी उपयोगिता बताते हुए कहा गया है कि षट्कर्मो के अभ्यास से कफ, वात व पित्त रोग, कुष्ठ रोग, प्लीहा, यकृत फेफड़ों तथा उदर के रोग दूर होते हैं।

षट्कर्मों की उपयोगिता

यदि षटकर्मों का अभ्यास किया जाये तो वे शरीर को पूर्ण आरोग्य प्रदान करते हैं। ये शरीर से मलों का निष्कासन कर देते हैं और कोई अन्य विकार उत्पन्न नहीं होने देते। शरीर से मलों की निवृत्ति होते ही आरोग्य प्राप्त हो जाता है।

हम उपनिषदों व वेदों का अवलोकन करें तो उपनिषदों व वेदों में कहा गया है 'जीवेम: शरदः शतम' अर्थात हम सौ वर्ष तक जीवित रहें। यह केवल एक विचारधारा ही नहीं, अपितु व्यावहारिक सत्य है। मनुष्य का शरीर यदि विकार रहित रहे तो यह सौ वर्षों से भी अधिक जीवित रह सकता है। भारतीय इतिहास में ऐसे अनेक पुरुष हुए हैं, जिन्होंने कई सौ वर्षों का आरोग्य पूर्ण व सुखपूर्वक जीवन जिया है।

षट्कर्मों की उपयोगिता

षट्कर्मों के दवारा जहाँ शरीर स्वस्थ, निरोग व ओजस्वी बनता है, वहीं दूसरी ओर मन में शान्ति व स्फूर्ति आती है तथा बुद्धि भी निर्मल व तीक्ष्ण हो जाती है। वर्तमान समय में विभिन्न शोध संस्थानों ने यह स्पष्ट किया है कि शोधन क्रिया (षटकर्म) शरीर व मन दोनों से सम्बन्धित रोगों के उपचार में एक अचूक एवं दिव्य रयासन का कार्य करते हैं। षटकर्म जहाँ शरीर के आन्तरिक स्थूल अंगों की शुद्धि करते हैं, वहीं इन्द्रियों, मन व बुद्धि जैसे सूक्ष्म करणों को भी मल रहित कर शान्ति प्रदान करते हैं।

इस आधार पर हम देखते हैं कि आन्तरिक शुद्धि, आरोग्यता तथा सम्पूर्ण स्वास्थ्य के लिए षटकर्मों की उपयोगिता सिद्ध होती है, वहीं दूसरी ओर षटकर्म मन व बुद्धि को भी एकाग्र व शान्त करते है और जिज्ञासु साधक के लिए मोक्ष तक का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

षटकर्मों के फल का वर्णन करते हुए हठयोग प्रदीपिका में कहा गया है-

षटकर्मनिर्गतस्थॉल्यकफ दोषमलादिक:।
प्राणायामं ततः कुर्यादनायासेन सिद्धयति।। (हठयोगप्रदीपिका -2/37)

अर्थात षटकर्मों के अभ्यास से साधक के शरीर की स्थूलता दूर हो जाती है तथा बीस प्रकार के कफ दोष, दूषित वात, पित्त आदि मल दूर हो जाते हैं जिससे प्राणायाम आदि करने में शीघ्र सफलता मिलती है। इस प्रकार हठयोग में षट्कर्मों का बहुत अधिक महत्व प्रतिपादित किया गया है और सामान्यतः षटकर्म का महत्वपूर्ण फल शुद्धिकरण है और जब शरीर का शुद्धिकरण होता है तब शरीर में कोई विकार नहीं रहते।

योग शुद्धि क्रियाएँ

ये 6 प्रकार की हैं |
1. जल, क्षीरं, स्वमूत्र, गोमूत्र, तैल, घृत, सूत्र रब्बर नेति क्रियाएं ।
2. जल, वमन, वस्त्र एवं दंड धौति क्रियाएँ |
3. वस्ति (एनिमा) क्रिया और शंख प्रक्षालन |
4. अग्निसार, उड़ियान एवं नौलि क्रियाएँ |
5. कपाल भाति एवं भस्त्रिका क्रियाएँ |
6. त्राटक क्रियाएँ |

नेति क्रियाओं से साधारणतया नाक, गला, धौति क्रियाओं से आमाशय, वस्ती क्रियाओं से मलाशय, नौलि क्रियाओं से उदर, कपाल भाति क्रियाओं से मस्तिष्क एवं त्राटक क्रियाओं से नेत्रों की शुद्धि होती है । ये छः क्रियाएँ अत्यंत नाजुक हैं | अतः साधक विशेषज्ञों की सलाह लेकर इनका अभ्यास करें तो ठीक होगा |

. नेति क्रियाएँ--- 1. जल नेति क्रिया

आज प्रदूषण से हवा भर गयी है | ऐसे वातावरण में जल नेति अत्यंत उपयोगी शुद्धि क्रिया है |

1) एक प्रतिशत नमक मिला हलका गरम पानी विशेष टोंटीवाले लोटे में भर कर उसे हाथ में लेना चाहिए | बैठ कर या खड़े होकर सिर को थोड़ा आगे की ओर झुका कर उसे बायीं और थोड़ा घुमाना चाहिए | बायें नासिकारंध्र में टोंटी रख कर पानी को अंदर लेकर, दायें नासिका रंध्र से बाहर निकालना चाहिए | सांस मुंह से लेनी और छोड़नी चाहिए | लोटे । का पानी जब तक समाप्त न हो । जाये तब तक यह क्रिया करनी रंध्र से पानी अंदर ले कर बायें नासिका रंध्र से बाहर निकालना चाहिए | दोनो ओर से यह क्रिया करने के बाद दोनों कान हाथों के दोनों अगूठों से बंद करते हुए थोड़ा सामने की ओर झुक कर मुँह से हवा जोर से अंदर लेकर नाक से झटके से बाहर निकाल देनी चाहिए |

. नेति क्रियाएँ-- 1. जल नेति क्रिया

जब तक नाक से सारा पानी निकल न जाये, तब तक ऐसा करना चाहिए | नहीं तो जुकाम हो सकता है | इसके लिए केन्द्रों में विशेष पात्र मिलते हैं | यह शुद्धि क्रिया रोज करते रहें तो बड़ा लाभ होगा |

2 टोंटीवाले लोटे में हलका गरम पानी भर कर उसमें थोड़ा सा नमक डालें । उस पानी को टोंटी के द्वारा नासिका रंध्र से अंदर खींच कर, मुह से वह पानी बाहर निकाल देना चाहिए । बाद दूसरे नासिकारंध्र से भी पानी टोंटी द्वारा अंदर खींच कर मुँह से बाहर निकालें ।

3) इसके बाद गिलास में पानी भर कर नाक के (नथुनों) सामने रख कर दोनों नासिका रंधों से पानी अंदर खींच कर उसे मुँह से बाहर निकाल देना चाहिए | ये क्रियाएँ कठिन है| अत: सावधानी से ये क्रियाएँ करनी चाहिए|

जल नासापान----- क्षीर- दूध नेति क्रिया

नासिका रंध्रों से अंदर खींचे हुए जल को मुँह से पीने की तरह पीना चाहिए। इस क्रिया को नासापान कहते हैं । नासापान करने के पूर्व नाक को जलनेति क्रिया द्वारा साफ करना चाहिए | इसके बाद नाक द्वारा अंदर खींचे जानेवाले जल को मुंह द्वारा बाहर निकाल देना चाहिए | इसके बाद ही नासापान करना चाहिए |

जल नेति क्रिया की ही तरह पानी मिले । कुनकुने दूध से क्षीर नेति क्रिया भी करनी चाहिए

इसके बाद हलका गरम दूध टोंटीवाले लोटे में भर कर, नासिका रंध्र से अंदर खींच कर उसे मुँह से बाहर निकाल देना चाहिए ।

दूध में कुछ भी मिलाये बिना गरम कर जलनासापान की तरह करना चाहिए | दूध से मलाई निकाल देनी चाहिए । दूध यदि गाढ़ा हो तो उसमें थोड़ा पानी मिला लें |

स्वमूत्र-गोमूत्र नेति क्रिया--- तैल तथा घृत नेति क्रिया

प्रात: काल विसर्जित स्वमूत्र को टोंटीवाले लोटे में भर कर जल नेति क्रिया की तरह स्वमूत्र नेति क्रिया की जा सकती है | इसी प्रकार ताजा गोमूत्र लोटे में भर कर गोमूत्र नेति क्रिया भी की जा सकती है |

क्षीर, स्वमूत्र और गोमूत्र नेति क्रियाएँ आवश्यकता के अनुसार करनी चाहिए | बाद जल नेति क्रिया करनी चाहिए।

दुपहर या रात में पीठ के बल लेट कर सिर थोड़ा पीछे झुका कर, हलका गरम तेल या घी की 5 या 6 बूंदे नासिका रंध्र में डाल कर साँस के साथ अंदर लेनी चाहिए | बाद में आराम लें । तिल का तेल, नारियल का तेल या शुद्ध घी का उपयोग करें | डालडा का उपयोग न करें |

सूत्र तथा रब्बर नेति क्रिया

एक सूत्र को दायें नथुने में रख कर गले के अंदर तक उसे धीमे से धकेलना चाहिए । तर्जनी और मध्यमा अंगुलियाँ मुँह में डाल कर धीरे से सूत्र के सिरे को उन उंगलियों से पकड़ कर मुँह से बाहर खींचना चाहिए। दोनों छोरों को हाथ से पकड़ कर आगे और पीछे दस बीस बाहर निकाल दें।

इसी प्रकार दूसरे नथुने से भी सूत्र के से बाहर लाकर ऊपर लिखे अनुसार आगे और पीछे आहिस्ते-आहिस्ते सावधानी से खींचते हुए बाहर निकाल लें ।

सूत्रनेति क्रिया की समाप्ति के बाद नमक से मिला थोड़ा सा हलका गरम पानी मुंह में भर कर थोड़ी देर गट-गट करके उसे बाहर थूक देना चाहिए। आरंभ में थोड़ी सी तकलीफ होगी | इससे घबराना नहीं चाहिए |

जल नेति क्रिया करने के बाद सूत्र नेति क्रिया करनी चाहिए। सूत्रनेति क्रिया के बाद फिर जलनेति क्रिया करनी चाहिए | सूत्र से रगड़ खा कर कभी कभी थोड़ा सा रक्त निकल सकता है | इससे डरना नहीं चाहिए|

एक दिन सूत्र नेतिक्रिया को स्थगित कर देना चाहिए | सूत्र नेति क्रिया के करने के एक दिन पूर्व नाक में हलके गरम तेल या घी की तीन चार बूंदे अवश्य डालनी चाहिए।

जलनेति क्रिया हर दिन कर सकते हैं । तेल, घृत एवं सूत्र नेति क्रिया कमसे कम हफ्ते में एक बार करें

नेति क्रिया के लाभ

उपर्युक्त सभी क्रियाओं के बाद जलनेति क्रिया अवश्य करें तथा नाक के अंदर के पानी को भस्त्रिका क्रिया करते हुए बाहर छींक दें |

नाक, कान, मुँह, कंठ, नेत्र तथा मस्तिष्क से संबंधित बीमारियाँ दूर होंगी | बहरापन, कानों में पीब-रक्त का निकलना, कानों में विविध ध्वनियों का गूँजना, नाक में अवरोध, नाक में बढ़ता दुर्मास, सूंघने पर गंध का अनुमान न होना, साइनस, आँखों का लाल होना, आँखों का पीलापन, मस्तिष्क संबंधी रोग, स्मरण शक्ति का घटना, धारणाशक्ति का घटना, सिर दर्द, आधा सिरदर्द तथा अनिद्रा आदि रोगों की तीव्रता कम होगी। कंठ से मस्तिष्क के ऊपर तक जितने अवयव हैं सभी की शुद्धि होगी

धौति क्रियाएँ-- जल धौति –गज करणी –कुंजल या वमन धौति क्रिया –

धौति का अर्थ है धुलाई | योग विद्या में इसे उदरशुद्धि कहते हैं | हाथी को ज्वर आवे तो वह यह क्रिया करता है | इसीलिए यह क्रिया गज करणी या कुंजल क्रिया भी कहलाती है | हाथी को देख कर मनुष्यने यह क्रिया सीखी|

मल विसर्जन करते समय जिस प्रकार बैठते हैं पानी पेट भर पी लें | पानी पीने के बाद खड़े ळी होकर पेट और कमर को इधर-उधर आगे पीछे, ऊपर नीचे तथा गोल घुमाएँ | इस तरह हिलाने , व घुमाने से एसिड़, श्रलेष्म तथा गैस आदि मलिन पदार्थ उदर में भरे उस पानी में मिल जाते हैं| इसके बाद बाये हाथ से पेट को दबा कर दाये हाथ की तर्जनी तथा मध्यम उंगलियों को गले में डाल कर अलिजिह्वा को थोड़ा दबा कर उसे इधर-उधर हिलाएँ| ऐसा करने से पेट में जो पानी है वह वमन के द्वारा मलिन पदार्थों के साथ बाहर निकल जाता

पेट का पानी जब तक पूरा बाहर निकल नहीं जाता, तो वह मूत्र के रूप में बाहर निकल जायेगा| दोनों उंगलियोंके नाखून बढ़े हुऐ न हो, इस पर ध्यान देना जरूरी है |

जल धौति या कुंजल क्रिया

जल धौति या कुंजल क्रिया विधि : दो लीटर गरम पानी (400 सेन्टीग्रेड) में एक चाय-चम्मच नमक मिलाएं। सीधे खड़े हो जाएं और तेजी से एक के बाद दूसरे गिलास से पूरा पानी पी जाएं। थोड़ा-सा आगे झुकें। बायें हाथ से पेट का निचला भाग दबायें और अनामिका व मध्यमा (दायें हाथ की) अंगुलियों को गले में कुछ अंदर तक डालें।

योग और बौद्धिक व्यक्तित्व का आयाम
(Yoga and Intellectual Dimension of Personality Development) :

बौद्धिक विकास हमारी मानसिक क्षमताओं के विकास से संबंधित है और महत्वपूर्ण भी हे जैसे की सोच, स्मृति, धारणा, निर्णय जैसी प्रक्रियाएं बनाना, कल्पना, रचनात्मकता, आदि इस आयाम के विकास है। यह बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह हमें नई चीजें सीखने और हासिल करने में सक्षम बनाते है। जैसे की ज्ञान और कौशल और आसन, प्राणायाम जैसे योगाभ्यास ध्यान, ध्यान (ध्यान) एकाग्रता, स्मृति को विकसित करने में मदद करते हैं और इस तरह बौद्धिक विकास में मदद मिलती है।

योग और व्यक्तित्व का सामाजिक आयाम
(Yoga and Social Dimension of Personality Development) :

प्राथमिक समाजीकरण, शायद **Personality Development** का सबसे महत्वपूर्ण पहलू बचपन के दौरान, आमतौर पर परिवार के भीतर होता है। जवाब देकर माता-पिता और दादा-दादी की स्वीकृति और अस्वीकृति और उनके उदाहरणों की नकल करते हुए, बच्चा भाषा और कई सीखता है जैसे की उसके / उसके समाज के बुनियादी व्यवहार पैटर्न। की प्रक्रिया और समाजीकरण ये केवल बचपन तक ही सीमित नहीं है, बल्कि जीवन भर चलता रहता है और बढ़ते बच्चे और किशोरों को मानदंडों और नियमों के बारे में सिखाएं रहते हे जिस समाज में वह रहता है। इस प्रक्रिया के कुछ प्रमुख तत्व ये हे दूसरों के लिए सम्मान शामिल करें, अन्य व्यक्तियों को ध्यान से सुनना, होना उन में दिलचस्पी रखे , और अपने विचारों और भावनाओं को विनम्रता से, ईमानदारी से और स्पष्ट रूप से देखा करे ताकि आपको आसानी से सुना और समझा जा सके।

योग और आध्यात्मिक व्यक्तित्व का आयाम
(Yoga and Spiritual Dimension of Personality Development) :

यह आयाम है मूल्यों के विकास **(like Personality Development)** से संबंधित। इसका संबंध स्वयं से भी है – बोध जो किसी की क्षमता को पहचानने से संबंधित है और उन्हें अधिकतम करने के लिए विकसित करना। इसका समुचित विकास हे और आयाम व्यक्ति को उसकी वास्तविक पहचान का एहसास कराने में मदद करता है। आध्यात्मिक के लिए विकास, यम, नियमा, प्रत्याहार और ध्यान उपयोगी हैं। यम और नियामा जबकि हमारे नैतिक मूल्यों को विकसित करने में मदद करते हैं। प्राणायाम, और ध्यान हमें हमारे सच्चे आत्म का एहसास करने में मदद करते हैं। आत्मनिरीक्षण 'स्व' के विकास के लिए बहुत प्रभावी है।

योग क्या है? | What is Yoga

योग शब्द ***संस्कृत धातु 'युज'*** से निकला है, जिसका मतलब है व्यक्तिगत चेतना या आत्मा का सार्वभौमिक चेतना या रूह से मिलन।

योग, भारतीय ज्ञान की पांच हजार वर्ष पुरानी शैली है । हालांकि कई लोग योग को केवल शारीरिक व्यायाम ही मानते हैं, जहाँ लोग शरीर को मोड़ते, मरोड़ते, खिंचते है और श्वास लेने के जटिल तरीके अपनाते है। यह वास्तव में केवल मनुष्य के मन और आत्मा की अनत क्षमता का खुलासा करने वाले इस गहन विज्ञान के सबसे सतही पहलू है। यौग विज्ञान में जीवन शैली का पूर्ण सार आत्मसात किया गया है|

"**योग सिर्फ व्यायाम और आसन नहीं है**।

यह भावनात्मक एकीकरण और रहस्यवादी तत्व का स्पर्श लिए हुए एक आध्यात्मिक ऊंचाई है, जो आपको सभी कल्पनाओं से परे की कुछ एक झलक देता है।"

अष्टांग योग

अष्टांग योगा में शरीर के आठ अंगों से जमीन को स्पर्श करते हैं इसलिए इसे अष्टांग योगा कहते हैं। इस आसन में जमीन का स्पर्श करने वाले अंग चिन, चेस्ट, दोनों हाथ, दोनों घुटने और दोनों पैर हैं। इस आसन को करते वक्त इस बात का ख्याल रखना चाहिए कि पेट से शरीर का स्पर्श बिलकुल ही न होने पाए। अष्टांग आसन मुद्रा में टेबल मुद्रा, श्वान मुद्रा और सर्प मुद्रा के आसनों का अभ्यास किया जाता है। इस आसन को जमीन पर करने से पहले अपने घुटने के नीचे कंबल अथवा तौलिया मोडकर रख लीजिए इससे घुटने आरामदायक स्थिति में रहेंगे और आप ज्यादा देर तक योगा कर सकते हैं। अष्टांग योगा करने से पीठ और गर्दन में मौजूद तनाव दूर होता है और अष्टांग आसन को हर रोज करने से शरीर की हड्डिया मजबूत होती हैं और शरीर लचीला होता है।

अष्टांग योग

महर्षि पतंजलि ने योग को 'चित्त की वृत्तियों के निरोध' (*योगः चित्तवृत्तिनिरोधः*) के रूप में परिभाषित किया है। उन्होंने 'योगसूत्र' नाम से योगसूत्रों का एक संकलन किया है, जिसमें उन्होंने पूर्ण कल्याण तथा शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शुद्धि के लिए आठ अंगों वाले योग का एक मार्ग विस्तार से बताया है। **अष्टांग योग** (आठ अंगों वाला योग), को आठ अलग-अलग चरणों वाला मार्ग नहीं समझना चाहिए; यह आठ आयामों वाला मार्ग है जिसमें आठों आयामों का अभ्यास एक साथ किया जाता है। योग के ये आठ अंग हैं:

१) यम, २) नियम, ३) आसन, ४) प्राणायाम, ५) प्रत्याहार, ६) धारणा ७) ध्यान ८) समाधि

अष्टांग योगा के फायदे

अष्टांग योगा करने से पीठ और गर्दन में मौजूद तनाव कम होता है।

अष्टांग योगा हर रोज करने से शरीर के सभी अंग (चेस्ट, पीठ, कंधे, हाथ आदि) मजबूत होते हैं।

अष्टांग योगा के अभ्यास से शरीर को लचीला बनाया जा सकता है।

अष्टांग योगा करने से फेफडों की कार्यक्षमता बढती है।

अष्टांग योगा करने से मोटापा आसानी से कम किया जा सकता है।

अष्टांग योगा करने से पाचन क्रिया अच्छी होती है और पेट संबंधित रोग नहीं होते हैं।

अष्टांग योगा करने से दिमाग तेज होता है और आदमी की उम्र भी बढती है।

अष्टांग योगा करते वक्त सावधानियां

अष्टांग योगा के बहुत फायदे हैं लेकिन अगर आपके शरीर में कोई बीमारी या समस्या है तो यह आसन नहीं करना चाहिए।

गर्दन और कंधों में अगर तकलीफ हो तो इस योग आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

कमर, कोहनी, हाथों की कलाई में परेशानी हो तो यह आसन की मुद्रा को करने से बचें।

यम

पांच सामाजिक नैतिकता

(क) **अहिंसा** - शब्दों से, विचारों से और कर्मों से किसी को अकारण हानि नहीं पहुँचाना

(ख) **सत्य** - विचारों में सत्यता, परम-सत्य में स्थित रहना, जैसा विचार मन में है वैसा ही प्रामाणिक बातें वाणी से बोलना

(ग) **अस्तेय** - चोर-प्रवृति का न होना

(घ) **ब्रह्मचर्य** - दो अर्थ हैं:

चेतना को ब्रह्म के ज्ञान में स्थिर करना

सभी इन्द्रिय-जनित सुखों में संयम बरतना

(च) **अपरिग्रह** - आवश्यकता से अधिक संचय नहीं करना और दूसरों की वस्तुओं की इच्छा नहीं करना

नियम

पाँच व्यक्तिगत नैतिकता

(क) **शौच** - शरीर और मन की शुद्धि

(ख) **संतोष** - संतुष्ट और प्रसन्न रहना

(ग) **तप** - स्वयं से अनुशाषित रहना

(घ) **स्वाध्याय** - आत्मचिंतन करना

(च) **ईश्वर-प्रणिधान** - इश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण, पूर्ण श्रद्धा

आसन स्थिरसुखमासनम्' (यो.सू. 2/46)।

योगासनों द्वारा शरीरिक नियंत्रण

महर्षि पतंजलि के अनुसार जिस अवस्था में शरीर अपेक्षित समय तक सुखपूर्वक स्थिर रह सके, उसे आसन कहते हैं। उपर्युक्त सूत्र में पतंजलि ने आसन की परिभाषा, समय-सीमा व उसके लाभों का भी वर्णन किया है। इसका सार यह है कि जब तक शरीर में स्थिरता और मन में सुख की अनुभूति हो रही है, तब तक आसन में स्थिर रहें। जब स्थिरता, अस्थिरता में और सुख, दु:ख में परिवर्तित होने लगे, तो आसन बदल लेना चाहिए। आमतौर पर हम देखते हैं कि हमारा शरीर एक मिनट भी स्थिर नहीं रह पाता। कभी हम हाथ हिलाते हैं, तो कभी पैर। लेकिन आसन के अभ्यास से शरीर व चित्त में स्थिरता आती है और सुख की अनुभूति होती है। आसनों के अभ्यास से साधक को द्वन्द्व नहीं सताते। आसनों की संख्या का महर्षि पतंजलि ने कोई वर्णन नहीं किया है।

मस्तिष्क को रखें शांत --- प्रतिबंध

कुछ तो स्वयं पर प्रतिबंध लगाना ही होगा। सोचें कि आप ज्यादा क्यों सोचते हैं। दिमाग में द्वंद्व क्यों रखते हैं। अपनी श्वासों को उखड़ा-उखड़ा क्यों रखते हैं, क्यों नहीं गहरी श्वास लेते हैं। चेहरे और आँखों में तनाव क्यों रखते हैं। कपाल पर सिलवटें क्यों बनाएँ रखते हैं? आखिर ऐसा क्या है कि आप भयाक्रांत हैं? चिंता और भय के अलावा भी ऐसी क्या बात है जो आपके मस्तिष्क को अशांत रखती है- इस सबको समझते हुए स्वयं पर प्रतिबंधात्मक कार्रवाई करें क्योंकि 'आप' अपने मस्तिष्क और उसकी तमाम हलचलों से श्रेष्ठ और दूर हैं। जरा हटकर सोचें।

प्राणायाम

श्वास-लेने सम्बन्धी खास तकनीकों द्वारा प्राण पर नियंत्रण

'प्राणस्य आयाम:', अर्थात् प्राण और आयाम, इन दो शब्दों से मिलकर बना है प्राणायाम। प्राण एक जीवनी शक्ति है। इसके बिना प्राणी जीवित नहीं रह सकता। दूसरी ओर, आयाम का मतलब है प्राण का ठहराव या विस्तार करना। जन्म के साथ ही प्राणी में श्वास-प्रश्वास की क्रिया प्रारंभ हो जाती है। इस क्रिया का अभाव ही मृत्यु है। बिना पानी व भोजन के तो व्यक्ति जीवित रह सकता है, लेकिन बिना प्राण के जीवित नहीं रह सकता। प्राणायाम के द्वारा प्राण पर नियंत्रण स्थापित किया जा सकता है।

अब ये करें : चंद्रभेदी, सूर्यभेदी और भ्रामरी प्राणायाम को अपनी दिनचर्या का हिस्सा बना लें।

भ्रामरी प्राणायम : दोनों हाथों के अँगूठे से दोनों कान बंद कर लें। दोनों हाथों की ऊपर की दो अँगुलियों को माथे पर रखें। तीसरी से नाक के बीच के भाग को हलका दबाएँ। बाकी की दोनों अँगुलियों को होंठों के ऊपर रखें। कोहनी ऊपर उठाए रखें। अब नासिका से पूरा श्वास भरें। कुछ क्षण आंतरिक कुम्भक कर नासिका से ही भौंरे की तरह गुंजन करते हुए धीरे-धीरे श्वास छोड़ें अर्थात रेचक करें। इसे चार से पाँच बार करें। इस गुंजन से कंपन पैदा होता है, जो मस्तिष्क तथा स्नायुमंडल को शांत करता है।

प्रत्याहार

इन्द्रियों को अंतर्मुखी करना महर्षि पतंजलि के अनुसार जो इन्द्रियां चित्त को चंचल कर रही हैं, उन इन्द्रियों का विषयों से हट कर एकाग्र हुए चित्त के स्वरूप का अनुकरण करना प्रत्याहार है। प्रत्याहार से इन्द्रियां वश में रहती हैं और उन पर पूर्ण विजय प्राप्त हो जाती है। अत: चित्त के निरुद्ध हो जाने पर इन्द्रियां भी उसी प्रकार निरुद्ध हो जाती हैं, जिस प्रकार रानी मधुमक्खी के एक स्थान पर रुक जाने पर अन्य मधुमक्खियां भी उसी स्थान पर रुक जाती हैं

जिस प्रकार कछुआ अपने अंगों को समेट लेता हैं उसी प्रकार इंद्रियों को इन घातक वासनाओं से विमुख कर अपनी आंतरिकता की ओर मोड़ देने का प्रयास करना ही प्रत्याहार है। इंद्रियों के व्यर्थ स्खलन को रोकें और उसे उस दिशा में लगाएं जिससे आपका जीवन सुख और शांतिमय व्यतीत हो साथ ही आप सेहतमंद बने रहें।

प्रत्याहार योग बनाएं शक्तिशाली

क्या है प्रत्याहार : अष्टांगयोग का पांचवां अंग प्रत्याहार है। यम, नियम, आसन,प्राणायाम और प्रत्याहार यह पांच योग के बाहरी अंग हैं अर्थात योग में प्रवेश करने की भूमिका मात्र। वासनाओं की ओर जो इंद्रियां निरंतर गमन करती रहती हैं, उनकी इस गति को अपने अंदर ही लौटाकर आत्मा की ओर लगाना या स्थिर रखने का प्रयास करना प्रत्याहार है।आंखों से व्यर्थ के दृष्य देखते रहते हैं, कानों से व्यर्थ की बहस सुनते रहते हैं, जबान से व्यर्थ की बात और भोजन करते रहते हैं, नाक से अनावश्यक सुगंध को सूंघते रहते हैं और मन-मस्तिष्क से व्यर्थ के विचार, चिंता और चिंतन को करते रहते हैं। यह अनावश्यक बह रही ऊर्जा को रोककर सही दिशा में लगाना या बचत करते रहना ही प्रत्याहार है। प्रत्याहार से व्यक्ति शक्तिशाली और सेहतमंद बना रहता है।

क्या है वासनाएं :

काम, क्रोध, लोभ, मोह यह तो मोटे-मोटे नाम हैं, लेकिन व्यक्ति उन कई बाहरी बातों में रत रहता है जो आज के आधुनिक समाज की उपज हैं जैसे शराबखोरी, सिनेमाई दर्शन और चार्चाएं, अत्यधिक शोरपूर्ण संगीत, अति भोजन जिसमें मांस भक्षण के प्रति आसक्ति, महत्वाकांक्षाओं की अंधी दौड़ और ऐसी अनेक बातें जिससे कि पांचों इंद्रियों पर अधिक भार पड़ता है और अंतत: वह समयपूर्व निढाल हो बीमारियों की चपेट में आ जाती है।

नुकसान

आंख रूप को, नाक गंध को, जीभ स्वाद को, कान शब्द को और त्वचा स्पर्श को भोगती है। भोगने की इस वृत्ति की जब अति होती है तो इस सबसे मन में विकार की वृद्धि होती है। ये भोग जैसे-जैसे बढ़ते हैं, इंद्रियां सक्रिय होकर मन को विक्षिप्त करती रहती हैं। मन ज्यादा व्यग्र तथा व्याकुल होने लगता है, जिससे शक्ति का क्षय होता है।

उपाय : इंद्रियों को भोगों से दूर करने तथा इंद्रियों के रुख को भीतर की ओर मोड़कर स्थिर रखने के लिए प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। प्राणायाम के अभ्यास से इंद्रियां स्थिर हो जाती हैं। सभी विषय समाप्त हो जाते हैं। अतः प्राणायाम के अभ्यास से प्रत्याहार की स्थिति अपने आप बनने लगती है। दूसरा उपाय है रोज सुबह और शाम पांच से तीस मिनट का ध्यान। इस सबके बावजूद अदि आपके भीतर संकल्प है तो आप संकल्प मात्र से ही प्रत्याहार की स्थिति में हो सकते हैं। हालाँकि प्रत्याहार को साधने के हठयोग में कई तरीके बताए गए हैं।

इसका लाभ

यम, नियम, आसन और प्राणायम को साधने से प्रत्याहार स्वत: ही सध जाता है।

इसके सधने से व्यक्ति का एनर्जी लेवल बढ़ता है। पवित्रता के कारण ओज में निखार आता है।

किसी भी प्रकार के मानसिक और शारीरिक रोग फटकते तक नहीं हैं।

आत्मविश्वास, निर्मिकता और विचार क्षमता बढ़ जाती है।

धारणा

एकाग्रचित्त होना अपने मन को वश में करना।

प्रत्याहार के द्वारा जब इन्द्रियां अंतर्मुखी हो जाती हैं, तब वे अपने विषय को वृत्तिमात्र से ग्रहण करती हैं।

अभ्यास की स्थिति में कुछ समय तक चित्त की वृत्ति ध्येय पर स्थिर हो जाती है, फिर अन्य वृत्ति चित्त में उत्पन्न होती है।

धीरे-धीरे चित्त को पुन: उसी ध्येय पर स्थिर किया जाता है।

।।देशबंधश्चितस्य धारणा।।-पतंजलि
चित्त का देश विशेष में बँध जाना धारणा है।

इस अवस्था में मन पूरी तरह स्थिर तथा शांत रहता है।

जैसे कि बाण के कमान से छूटने के पूर्व लक्ष्य पर कुछ देर के लिए निगाहें स्थिर हो जाती हैं, जैसे कि तूफान के आने से पूर्व कुछ देर हवाएँ स्थिर हो जाती हैं, जैसे कि दो भीमकाय बादलों के टकराने के पूर्व दोनों चुपचाप नजदीक आते रहते हैं।

ठीक उसी तरह योगी के मन की अवस्था हो चलती है, जबकि उसके एक तरफ संसार होता है तो दूसरी तरफ रहस्य का सागर। यह मन से मुक्ति की शुरुआत भी है।

धारणा सिद्ध व्यक्ति की पहचान यह है कि उसकी निगाहें स्थिर रहती

दृड़ निश्चियी

धारणा के संबंध में भगवान महावीर ने बहुत कुछ कहा है---

श्वास-प्रश्वास के मंद व शांत होने पर, इंद्रियों के विषयों से हटने पर, मन अपने आप स्थिर होकर शरीर के अंतर्गत किसी स्थान विशेष में स्थिर हो जाता है तो ऊर्जा का बहाव भी एक ही दिशा में होता है। ऐसे चित्त की शक्ति बढ़ जाती है,

वह जो भी सोचता है वह घटित होने लगता है। जो लोग दृड़ निश्चिय होते हैं, अनजाने में ही उनकी भी धारणा पुष्ट होने लगती है।

धारणा के समुद्र में छलांग लगाने की तैयारी मात्र माना गया है।

यम, नियम, आसन, प्राणायम और प्रत्याहार को क्रमश: धारणा के समुद्र में छलाँग लगाने की तैयारी मात्र माना गया है।

धारणा से ही कठिन परीक्षा और सावधानी की शुरुआत होती है।

जिसे धारणा सिद्ध हो जाती है, कहते हैं कि ऐसा योगी अपनी सोच या संकल्प मात्र से सब कुछ बदल सकता है।

ध्यान है योग की आत्मा
ध्यान से आत्मिक बल की प्राप्ति संभव

ध्यान

ध्यान मन को शान्त एवं एकाग्र कर अंतर्मुखी बनाने की एक अनूठी विधा है। यह साधक के भीतर स्थित काम, क्रोध, लोभ, मोह, राग-द्वेष, अहंकार आदि विकारों को क्षीण कर देता है। तब साधक दिन भर के क्रियाकलाप करते हुए भी अपने भीतर स्थित परम चेतना के साथ जुड़ा रहता है।

ध्यान के समय चित्त अन्य विषयों से हट जाता है और केवल ध्येयविषयक वृत्ति का ही आवागमन होता है। ध्यान में तेल की धारा की तरह एक ही वृत्ति का प्रवाह होता रहता है।

ध्यान से आत्मिक बल की प्राप्ति संभव

जो तन, मन और आत्मा के बीच लयात्मक संबंध बनाता है। ध्यान के द्वारा हमारी ऊर्जाकेंद्रित होती है। ऊर्जा केंद्रित होने से मन और शरीर में शक्ति का संचार होता है एवं आत्मिक बल बढ़ता है। योग में ध्यान का बहुत ही महत्व है। ध्यान के द्वारा हमारी ऊर्जा केंद्रित होती है। ऊर्जा केंद्रित होने से मन और शरीर में शक्ति का संचार होता है एवं आत्मिक बल बढ़ता है। ध्यान से वर्तमान को देखने और समझने में मदद मिलती है।

वर्तमान में हमारे सामने जो लक्ष्य है उसे प्राप्त करने की प्रेरण और क्षमता भी ध्यान से प्राप्त होता है। ध्यान को योग की आत्मा कहा जाता है। प्राचीन काल में योगी योग क्रिया द्वारा अपनी ऊर्जाको संचित कर आत्मिक एवं पारलौकिक ज्ञान और दृष्ट प्राप्त करते थे। ध्यान योग वास्तव में योग का महत्वपूर्ण तत्व है जो तन, मन और आत्मा के बीच लयात्मक संबंध बनाता है और उसे बल प्रदान करता है।

हमारे मन में एक साथ कई विचार चलते रहते हैं। मन में दौड़ते विचरों से मस्तिष्क में कोलाहल सा उत्पन्न होने लगता है जिससे मानसिक अशांति पैदा होने लगती है। ध्यान अनावश्यक विचारों को मन से निकालकर शुद्ध और आवश्यक विचारों को मस्तिष्क में जगह देता है। ध्यान का नियमित अभ्यास करने से आत्मिक शक्ति बढ़ती और मानसिक शांति की अनुभूति होती है। ध्यान का अभ्यास करते समय शुरू में पाँच मिनट भी काफी होता है। अभ्यास से पच्चीस-तीस मिनट तक ध्यान लगा सकते हैं।

आज की भाग दौड़ भरी जिंदगी में मन को एकाग्र कर पाना और ध्यान लगाना बहुत ही कठिन है। मेडिटेशन यानी ध्यान की क्रिया शुरू करने से पहले वातावरण को इस क्रिया हेतु तैयार कर लेना चाहिए। ध्यान की क्रिया उस स्थान पर करना चाहिए जहाँ शांति हो और मन को भटकाने वाले तत्व मौजूद नहीं हों। ध्यान के लिए एक निश्चित समय बना लेना चाहिए इससे कुछ दिनों के अभ्यास से यह दैनिक क्रिया में शामिल हो जाता है फलत ध्यान लगाना आसान हो जाता है।

आसन में बैठने का तरीका ध्यान में काफी मायने रखता है। ध्यान की क्रिया में हमेशा सीधा तन कर बैठना चाहिए। दोनों पैर एक दूसरे पर क्रॉस की तरह होना चाहिए और आँखें मूँद कर नेत्र को मस्तिष्क के केंद्र में स्थापित करना चाहिए। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इस क्रिया में किसी प्रकार का तनाव नहीं हो और आपकी आँखें स्थिर और शांत हों।

यह क्रिया आप भूमि पर आसन बिछाकर कर सकते हैं अथवा पीछे से सहारा देने वाली कुर्सी पर बैठकर भी कर सकते हैं। साँस की गति का महत्व योग में साँस की गति को आवश्यक तत्व के रूप में मान्यता दी गई है। साँस लेने और छोड़ने की क्रिया द्वारा ध्यान को केंद्रित करने में मदद मिलती है। ध्यान करते समय जब मन अस्थिर होकर भटक रहा हो उस समय श्वसन क्रिया पर ध्यान केंद्रित करने से धीरे धीरे मन स्थिर हो जाता है और ध्यान केंद्रित होने लगता है। ध्यान करते समय गहरी साँस लेकर धीरे-धीरे से साँस छोड़ने की क्रिया से काफी लाभ मिलता है।

मारे मन में एक साथ कई विचार चलते रहते हैं। मन में दौड़ते विचारों से मस्तिष्क में कोलाहल सा उत्पन्न होने लगता है जिससे मानसिक अशांति पैदा होने लगती है। ध्यान अनावश्यक विचारों को मन से निकालकर शुद्ध और आवश्यक विचारों को मस्तिष्क में जगह देता है।

ध्यान तन, मन और आत्मा के बीच लयात्मक सम्बन्ध बनाता है और उसे बल प्रदान करता है। ध्यान का नियमित अभ्यास करने से आत्मिक शक्ति बढ़ती और मानसिक शांति की अनुभूति होती है

ध्यान से वर्तमान को देखने और समझने में मदद मिलती है। शुद्ध रूप से देखने की क्षमता बढ़ने से विवेक जाग्रत होगा। विवेक के जाग्रत होने से होश बढ़ेगा। होश के बढ़ने से मृत्यु काल में देह के छूटने का बोध रहेगा। देह के छूटने के बाद जन्म आपकी मुट्ठी में होगा। यही है ध्यान का महत्व।

सिर्फ तुम

खुद तक पहुंचने का एक मात्र मार्ग ध्यान ही है। ध्यान को छोड़कर बाकी सारे उपाय प्रपंच मात्र हैं। यदि आप ध्यान नहीं करते हैं तो आप स्वयं को पाने से चूक रहे हैं। स्वयं को पाने का अर्थ है कि हमारे होश पर भावना और विचारों के जो बादल हैं उन्हें पूरी तरह से हटा देना और निर्मल तथा शुद्ध हो जाना।

ज्ञानीजन कहते हैं कि जिंदगी में सब कुछ पा लेने की लिस्ट में सबमें ऊपर स्वयं को रखो। मत चूको स्वयं को। 70 साल सत्तर सेकंड की तरह बीत जाते हैं। योग का लक्ष्य यह है कि किस तरह वह तुम्हारी तंद्रा को तोड़ दे इसीलिए यम, नियम, आसन, प्राणायम, प्रत्याहार और धारणा को ध्यान तक पहुँचने की सीढ़ी बनाया है।

ध्यान से मानसिक लाभ

शोर और प्रदूषण के माहौल के चलते व्यक्ति निरर्थक ही तनाव और मानसिक थकान का अनुभव करता रहता है। ध्यान से तनाव के दुष्प्रभाव से बचा जा सकता है। निरंतर ध्यान करते रहने से जहां मस्तिष्क को नई उर्जा प्राप्त होती है वहीं वह विश्राम में रहकर थकानमुक्त अनुभव करता है। गहरी से गहरी नींद से भी अधिक लाभदायक होता है ध्यान।

विशेष : आपकी चिंताएं कम हो जाती हैं। आपकी समस्याएं छोटी हो जाती हैं। ध्यान से आपकी चेतना को लाभ मिलता है। ध्यान से आपके भीतर सामंजस्यता बढ़ती है। जब भी आप भावनात्मक रूप से अस्थिर और परेशान हो जाते हैं, तो ध्यान आपको भीतर से स्वच्छ, निर्मल और शांत करते हुए हिम्मत और हौसला बढ़ाता है।

समाधि की अवस्था

समाधि समयातीत है जिसे मोक्ष कहा जाता है। इस मोक्ष को ही जैन धर्म में कैवल्य ज्ञान और बौद्ध धर्म में निर्वाण कहा गया है। योग में इसे समाधि कहा गया है। इसके कई स्तर होते हैं। मोक्ष एक ऐसी दशा है जिसे मनोदशा नहीं कह सकते।

समाधि योग का सबसे अंतिम पड़ाव है। समाधि की प्राप्ति तब होती है, जब व्यक्ति सभी योग साधनाओं को करने के बाद मन को बाहरी वस्तुओं से हटाकर निरंतर ध्यान करते हुए ध्यान में लीन होने लगता है।

समाधि की अवस्था : जो व्यक्ति समाधि को प्राप्त करता है उसे स्पर्श, रस, गंध, रूप एवं शब्द इन 5 विषयों की इच्छा नहीं रहती तथा उसे भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, मान-अपमान तथा सुख-दुःख आदि किसी की अनुभूति नहीं होती। ऐसा व्यक्ति शक्ति संपन्न बनकर अमरत्व को प्राप्त कर लेता है। उसके जन्म-मरण का चक्र समाप्त हो जाता है।

क्या हैं समाधि

मोक्ष या समाधि का अर्थ अणु-परमाणुओं से मुक्त साक्षीत्व पुरुष हो जाना। तटस्थ या स्थितप्रज्ञ अर्थात परम स्थिर, परम जाग्रत हो जाना। ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय का भेद मिट जाना। इसी में परम शक्तिशाली होने का 'बोध' छुपा है, जहाँ न भूख है न प्यास, न सुख, न दुख, न अंधकार न प्रकाश, न जन्म है, न मरण और न किसी का प्रभाव। हर तरह के बंधन से मुक्ति। परम स्वतंत्रता अतिमानव या सुपरमैन।

संपूर्ण समाधि का अर्थ है मोक्ष अर्थात प्राणी का जन्म और मरण के चक्र से छुटकर स्वयंभू और आत्मवान हो जाना है। समाधि चित्त की सूक्ष्म अवस्था है जिसमें चित्त ध्येय वस्तु के चिंतन में पूरी तरह लीन हो जाता है। जो व्यक्ति समाधि को प्राप्त करता है उसे स्पर्श, रस, गंध, रूप एवं शब्द इन 5 विषयों की इच्छा नहीं रहती तथा उसे भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, मान-अपमान तथा सुख-दु:ख आदि किसी की अनुभूति नहीं होती।

समाधि समय की स्थिति

भावार्थ : ध्यान का अभ्यास करते-करते साधक ऐसी अवस्था में पहुंच जाता है कि उसे स्वयं का ज्ञान नहीं रह जाता और केवल ध्येय मात्र रह जाता है, तो उस अवस्था को समाधि कहते हैं।

समाधि की अवस्था में सभी इन्द्रियां मन में लीन हो जाती है। व्यक्ति समाधि में लीन हो जाता है, तब उसे रस, गंध, रूप, शब्द इन 5 विषयों का ज्ञान नहीं रह जाता है। उसे अपना-पराया, मान-अपमान आदि की कोई चिंता नहीं रह जाती है।

समाधि समय की स्थिति : जब पूर्ण रूप से सांस पर नियंत्रण हो जाता है और मन स्थिर व सन्तुलित हो जाता है, तब समाधि की स्थिति कहलाती है। प्राणवायु को 5 सैकेंड तक रोककर रखना 'धारणा' है, 60 सैकेंड तक मन को किसी विषय पर केंद्रित करना 'ध्यान' है और 12 दिनों तक प्राणों का निरंतर संयम करना ही समाधि है।

समाधि

आत्मा से जुड़ना: शब्दों से परे परम-चैतन्य की अवस्था हम सभी समाधि का अनुभव करें !!!

न की अवस्था में ध्याता अर्थात् ध्यान करने वाला, ध्येय और ध्यान आपस में मिल जाते हैं। इससे ध्येय के यथार्थ स्वरूप का पता नहीं चल पाता। लेकिन जब ध्यान प्रबल हो जाता है, तब ध्येय का स्वरूप विराट होने लगता है और ध्याता अपने स्वरूप में सर्वथा शून्य जैसा होकर ध्येय को स्वरूपमात्र में देखने लगता है। समाधि की अवस्था में ध्येय का स्वरूप ध्याता और ध्यान से अलग होकर ध्येयाकार वृत्ति में पूर्णता से महसूस होने लगता है। जैसे नमक पानी में मिल जाने से उसके साथ एकरूप हो जाता है, उसी तरह जब आत्मा और मन की एकरूपता हो जाती है, तो वह अवस्था समाधि कहलाती है। समाधि के दो भेद बताए गए हैं-सम्प्रज्ञात (सविकल्प अथवा सबीज) समाधि व असम्प्रज्ञात (निर्विकल्प अथवा निबीर्ज) समाधि।

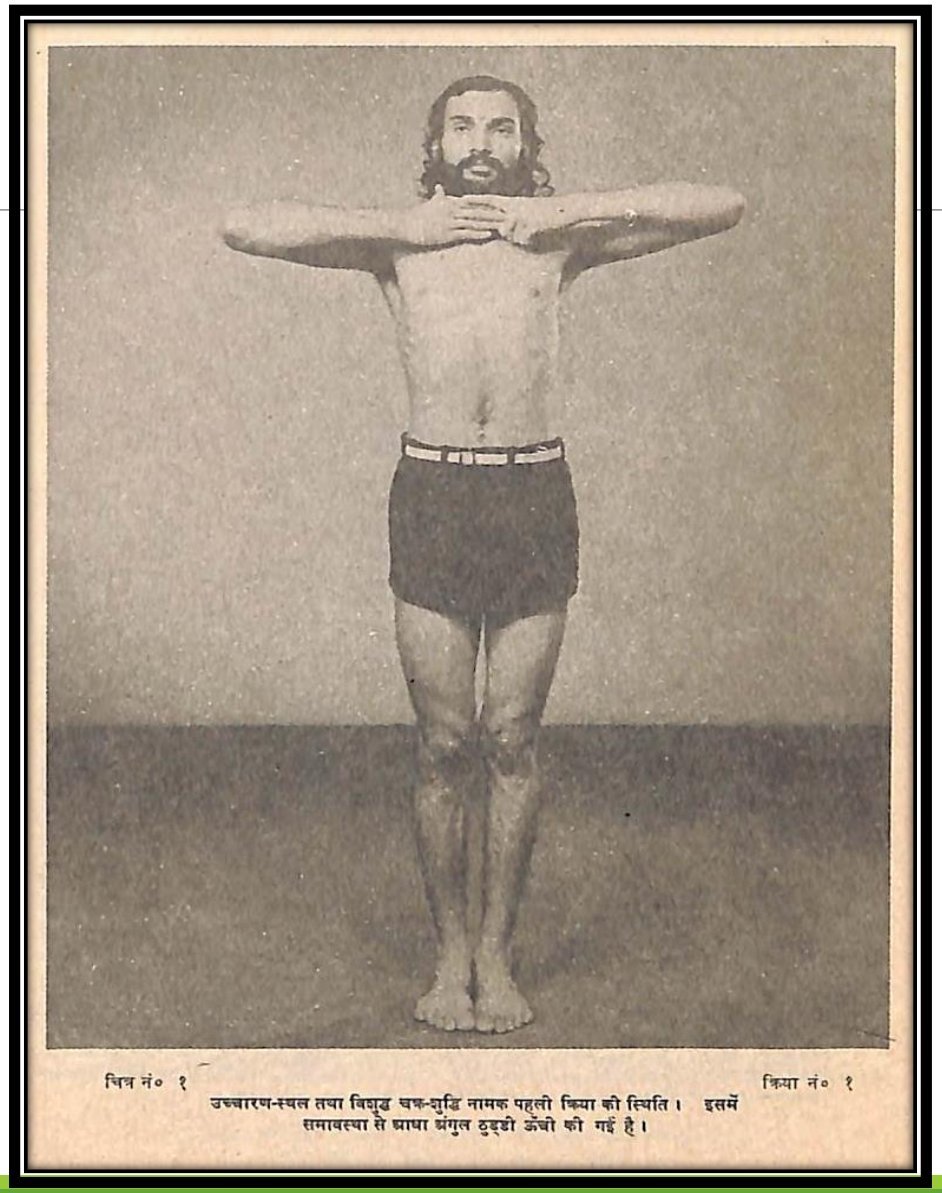

चित्र नं० १ क्रिया नं० १

उच्चारण-स्थल तथा विशुद्ध चक्र-शुद्धि नामक पहली क्रिया की स्थिति। इसमें समावस्था से आधा अंगुल ठुड्डी ऊँची की गई है।

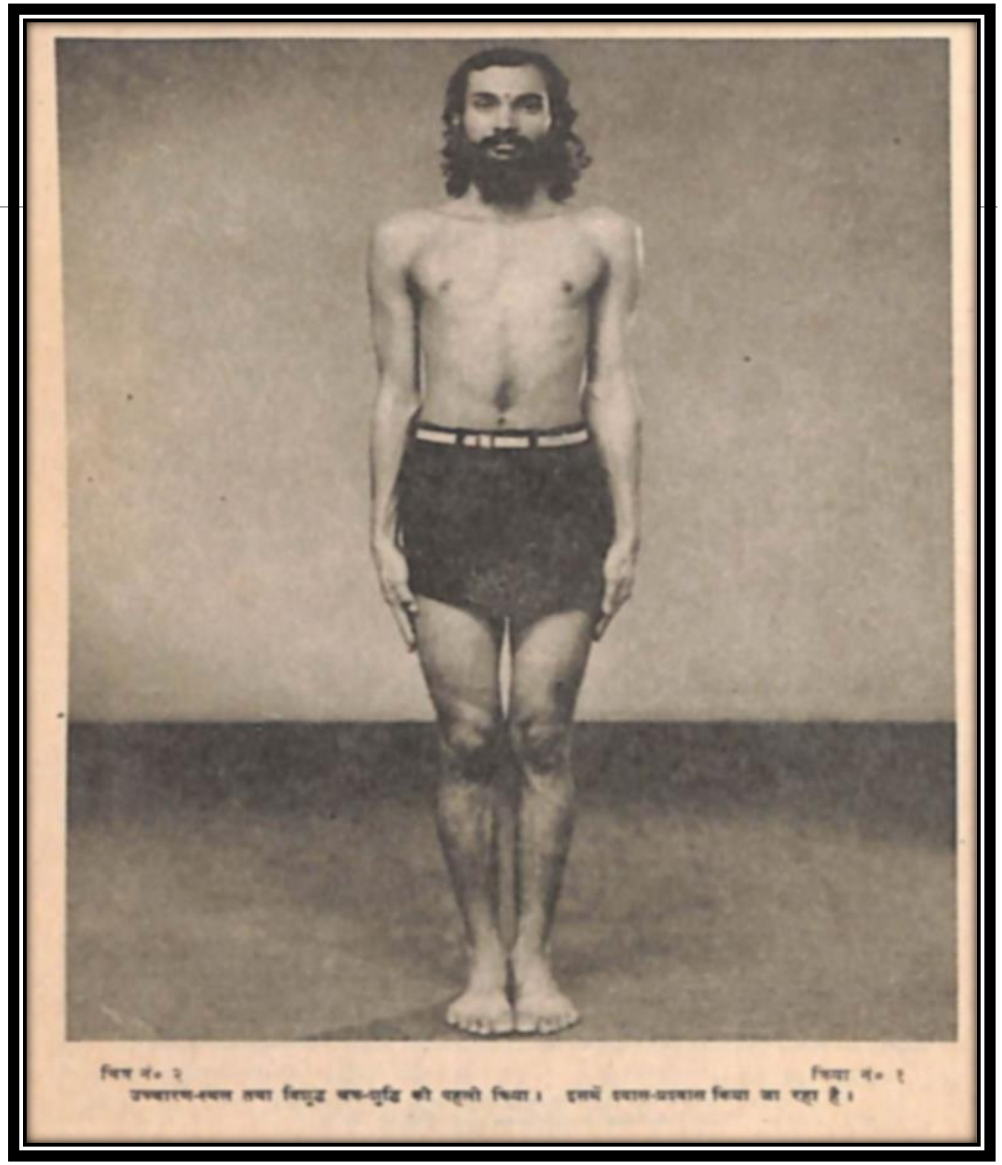

चित्र नं० २ क्रिया नं० १

उच्चारण-स्थल तथा विशुद्ध चक्र-शुद्धि की पहली क्रिया। इसमें श्वास-प्रश्वास किया जा रहा है।

क्रिया—मन से बाह्यवृत्तियों को हटाकर प्रभु से प्रार्थना करें अर्थात् एक स्वरूप का ध्यान करें। ज्यों-ज्यों मन एकाग्र हो, भुजवल्लियों तथा हथेलियों को ढीला करें। मन एकाग्र न होने पर हाथों को बलपूर्वक दबाना चाहिए। चित्र नं० ३ देखें।

लाभ—इस क्रिया के अभ्यास से मानसिक विकारों की निवृत्ति, मनोवहा नाड़ी की ऊर्ध्वगति, इष्टानुकम्पा की प्राप्ति और शरीर के अनेक रोगों की निवृत्ति होती है। विशेषतया यह क्रिया चित्त की एकाग्रता के लिए बहुत उपयोगी है। आत्म-साक्षात्कार एवं परम शान्ति-प्राप्ति का यह अभ्यास अचूक साधन है। महात्मा बुद्ध को किसी महर्षि द्वारा इसी अभ्यास को बतलाये जाने पर बोधिवृक्ष के नीचे परम शान्ति प्राप्त हुई थी। इसी क्रिया के अभ्यास से वे काम (विषय-वासना) पर पूर्ण विजय प्राप्त कर सके थे।

विशेष—"मनोवहा नाड़ी" अर्थात् वीर्य बहानेवाली नाड़ी—जिसके द्वारा मनन किया जाता है, उस नाड़ी का किंचित् भी नीचे प्रवाह होने पर मन चलायमान होने लगता है, और जब यह नाड़ी ऊर्ध्वमुखी रहती है, तो मन में एकाग्रता आती है। मन के एकाग्र होने पर ही सम्पूर्ण इन्द्रियाँ अपने वश में रहती हैं। किसी भी विषय में अपने जीवन में पूर्ण सफलता प्राप्त करने के लिए मन की एकाग्रता परम आवश्यक है।

३—बुद्धि तथा धृति-शक्ति-विकासक

स्थिति—पैर परस्पर मिले हुए हों, पैरों से स्कन्ध तक का विभाग सरलता से सीधा रखते हुए मुख बन्द करके सिर को पीछे की ओर पूर्ण रूप से झुकावें। नेत्रों को पूर्ण रूप से खोलकर आकाश की ओर देखते हुए खड़े रहें।

क्रिया—शिखामण्डल में ध्यान रखते हुए दोनों नासिकारन्ध्रों से लोहार की धौंकनी की भाँति यथाशक्ति बलवेग प्रदान करते हुए श्वास-प्रश्वास करें। आरम्भिक क्रम २५ बार। चित्र नं० ४ देखें।

लाभ—शिखास्थान के नीचे बुद्धि-स्थल साधारण गाय के खुर के परिमाणवाला है। इस बुद्धिमण्डल के अन्दर घड़ी की सूई के समान एक नाड़ी निरन्तर घूमती रहती है, जो कि सभी इन्द्रियों और अङ्ग-प्रत्यङ्गों को ज्ञान (सज्ञा) प्रदान करती है।

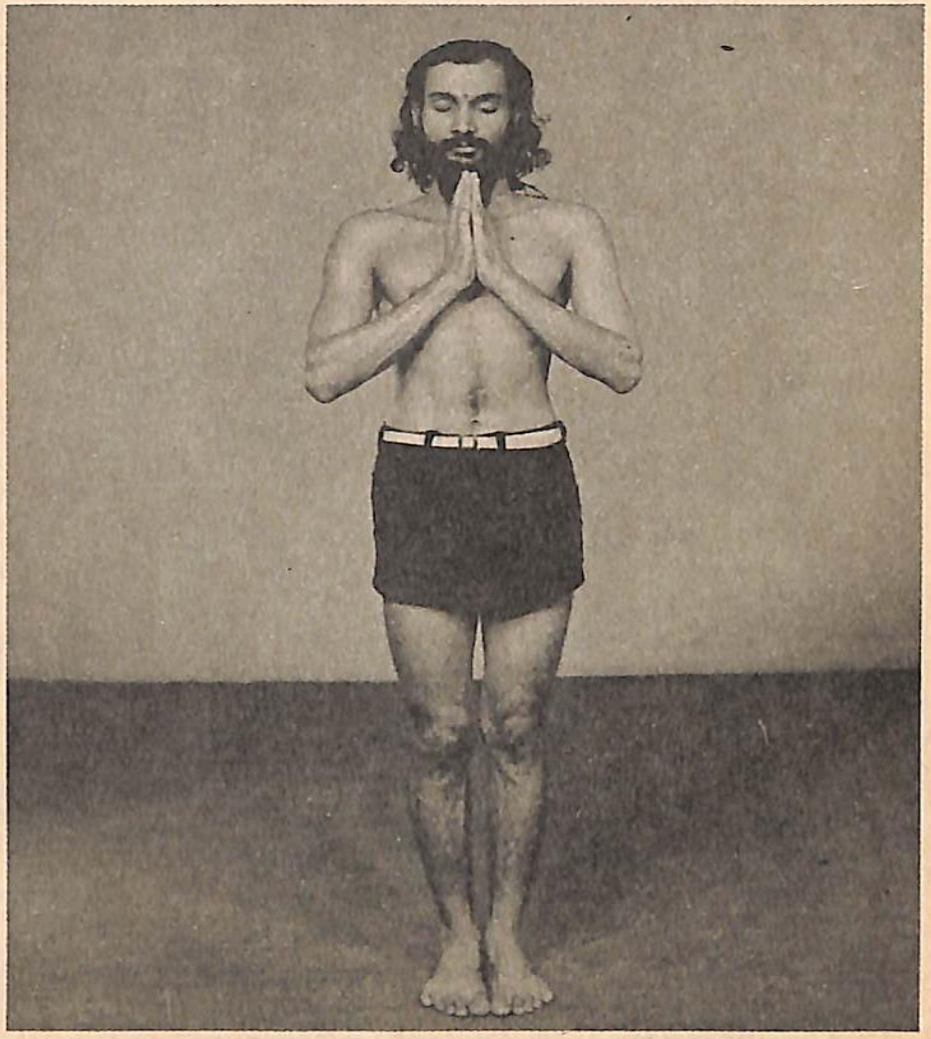

चित्र नं० ३ क्रिया नं० २

अन्तःकरण की शुद्धि तथा चित्त की एकाग्रता के लिए यौगिक प्रार्थना की स्थिति।
इसमें अपने इष्ट स्वरूप का ध्यान किया जा रहा है।

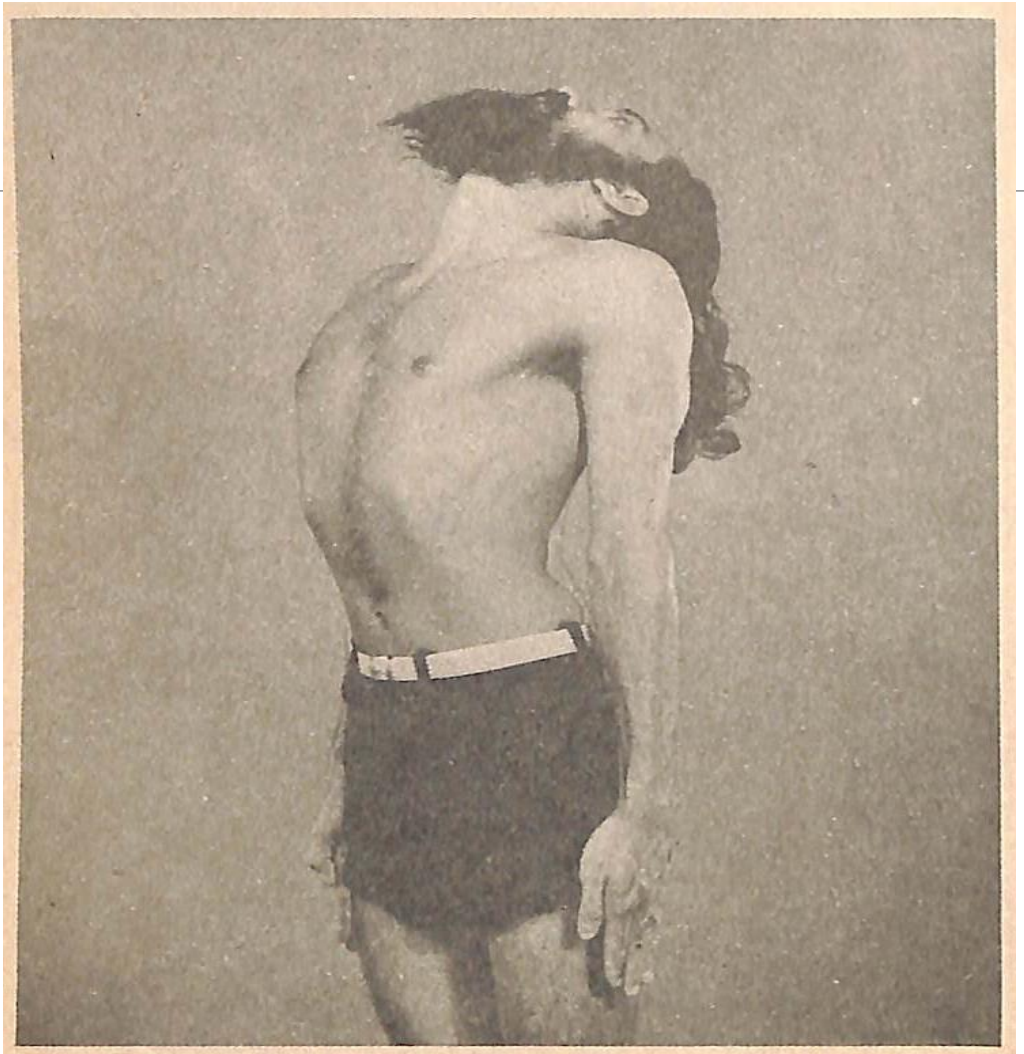

चित्र नं० ४ क्रिया नं० ३

बुद्धि तथा धृति-शक्ति-विकासक किया की स्थिति। इसमें शिखामण्डल में
धारणा रखते हुए श्वास-प्रश्वास किया जा रहा है।

उसमें कफ आदि की विषमता होने पर नाड़ी की गति अवरुद्ध हो जाती है, जिसके परिणामस्वरूप बुद्धिमान्द्य, विस्मृति, विक्षेप, संशय आदि दोष उत्पन्न हो जाते हैं। इस क्रिया के अभ्यास से समस्त दोष दूर हो जाते हैं और बुद्धितत्व की विशुद्धि, धृति-शक्ति की वृद्धि तथा सद्बुद्धि प्रदान करनेवाले ज्ञानतन्तुओं की जागृति होती है।

४—स्मरण-शक्ति-विकासक

स्थिति—पैर परस्पर मिले हुए हों, पैरों से स्कन्ध तक का विभाग सरलता से सीधा रखकर पैरों से डेढ़ गज की दूरी पृथ्वी पर नीचे की ओर दृष्टि जमाकर खड़े हों। ग्रीवा समावस्था में ही रहे।

क्रिया—ब्रह्मरन्ध्र (दशमद्वार) सहस्रारविन्द में ध्यान रखते हुए, आन्तरिक बलवेग प्रदान करते हुए श्वास-प्रश्वास करें। आरम्भिक क्रम २५ बार। चित्र नं० ५ देखें।

लाभ—मस्तक और शिखा-स्थान के मध्य मस्तिष्क (स्मृतिमण्डल) में कफ आदि की विषमता से उत्पन्न होनेवाले पागलपन, भ्रान्ति, विस्मृति, उन्माद आदि रोगों की निवृत्ति होती है। यह क्रिया मस्तिष्क से अधिक परिश्रम करनेवालों की थकावट दूर करके अधिक-से-अधिक कार्य करने की क्षमता तथा स्मरण-शक्ति का विकास प्रदान करती है। स्वाध्यायशील, अन्य कलाकार विद्यार्थियों तथा वकीलों के लिए यह अभ्यास परम उपयोगी है।

५—मेधा-शक्ति-विकासक

स्थिति—पैर परस्पर मिले हुए हों, पैरों से स्कन्ध तक का विभाग सरलता से सीधा रखकर नेत्रों को बन्द करके ठुड्डी कण्ठकूप से लगाकर खड़े रहें।

क्रिया—गले के पीछे गढ़ीले स्थान, मेधाचक्र पर ध्यान रखकर आन्तरिक बल प्रदान करते हुए लोहार की धौंकनी की भाँति उच्च स्वर से श्वास-प्रश्वास करें।

विशेष—ध्यान रहे कि एक से पाँच क्रिया पर्यन्त श्वास-प्रश्वास करते समय जितने जोर से श्वास अन्दर खींचें, उतने ही जोर से श्वास बाहर छोड़ना चाहिए। (आरम्भिक क्रम २५ बार, चित्र नं० ६ देखें।)

लाभ—इस क्रिया से मेधा-स्थान में होनेवाले कफ आदि दोषों का विनाश होता है। परम प्रेम तथा आकर्षण-शक्ति की प्राप्ति होती है और प्राण सुषुम्णावाही होता है।

जालन्धरे कृते बन्धे कण्ठसंकोचलक्षणे।
न पीयूषं पतत्यग्नौ न च वायुः प्रधावति॥
(योगकुण्डल्युपनिषत्)

अर्थात्—कण्ठसंकोचरूपी जालन्धर बन्ध लगाने से ऊपर सहस्रारविन्द से टपकनेवाला अमृत बिन्दु जठराग्नि से भस्म नहीं होता है और प्राणवायु का निरोध करके कुण्डलिनीशक्ति को जागृत करता है।

विशेष—उपर्युक्त एक से पाँच तक की समस्त क्रियाओं से मस्तिष्क में उत्पन्न होनेवाले वात, पित्त, कफादि दोष जो विस्मृति, विक्षेप, बुद्धिमान्द्य आदि रोगों के कारण बनते हैं, उनका नाश होता है और योगशास्त्रानुसार शरीर के समस्त चक्रों की शुद्धि तथा ग्रन्थि विभेदन हो जाता है।

६—नेत्र-शक्ति-विकासक

स्थिति—पैर परस्पर मिले हुए हों, पैरों से स्कन्ध तक का विभाग सरलता से सीधा रखते हुए ग्रीवा को पूर्ण रूप से पीछे झुकाकर खड़े रहें।

क्रिया—दोनों नेत्रों से पूर्णतया आन्तरिक बल प्रदान करते हुए भ्रूमध्य में निर्निमेष (बिना पलक झपके) देखते रहें। जब नेत्रों में थकावट प्रतीत हो अथवा अश्रुपात होने के पहले ही नेत्रों को बन्द कर लें। पुनः नेत्रों को खोलकर पहले की भाँति ही करें। आरम्भिक क्रम ५ मिनट। चित्र नं० ७ देखें।

लाभ—इस क्रिया के अभ्यास से नेत्रों में होनेवाले समस्त दोषों की निवृत्ति होती है और नेत्रों की ज्योति बढ़ती है तथा गिद्धदृष्टि प्राप्त होती है। योगशास्त्र-विषयक उपनिषद् ग्रन्थों में इस क्रिया के विषय में ऐसा वर्णन है :—

मोचनं नेत्ररोगाणां निद्रादीनां कपाटकम्।
यत्नतस्त्राटकं गोप्यं यथा हाटकपेटकम्॥

अर्थात्—यह त्राटक नाम की क्रिया नेत्रों के समस्त रोगों को नष्ट करनेवाली है तथा निद्रा-तन्द्रा आदि को रोकने में कपाट (किवाड़) का कार्य करती है। इस त्राटक कर्म को सुवर्ण पेटिका के समान गुप्त रखना चाहिए।

विशेष—इस क्रिया के साथ-साथ एक-दो और यौगिक क्रियाएँ करने से नेत्रों के

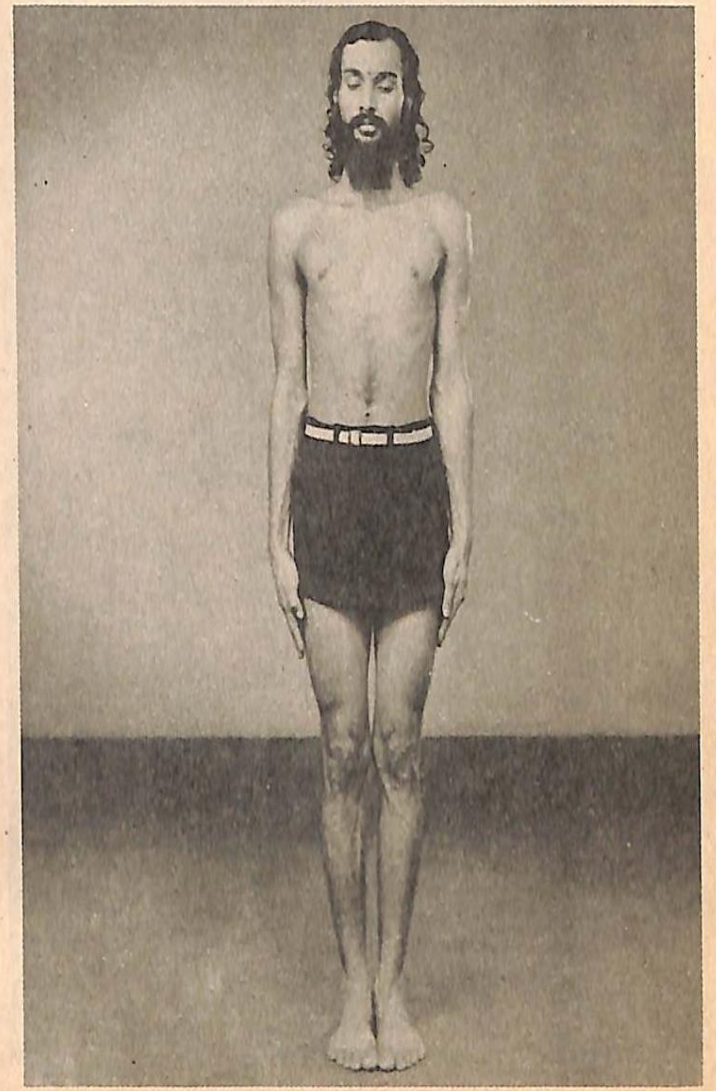

चित्र नं० ५ क्रिया नं० ४

स्मरण-शक्ति-विकासक नामक चौथी क्रिया की स्थिति और क्रिया। इसमें सहस्रारविन्द में धारणा रखकर डेढ़ गज की दूरी पर देखते हुए श्वास-प्रश्वास किया जा रहा है।

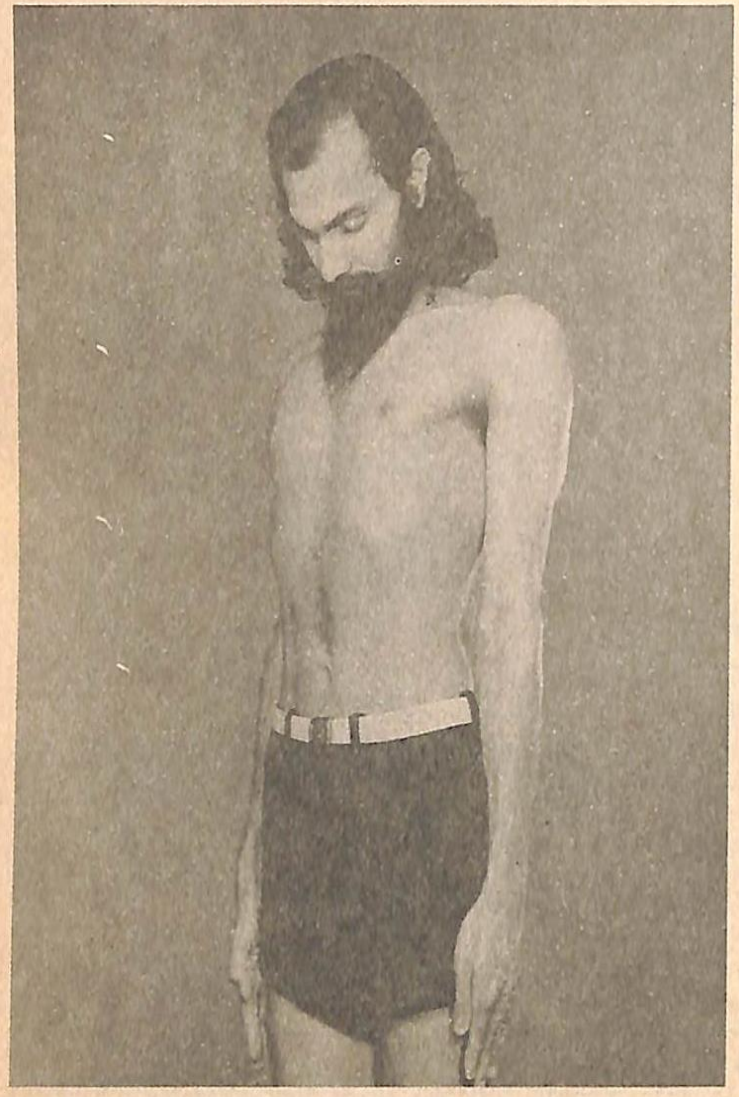

चित्र नं० ६ क्रिया नं० ५

मेधाशक्ति-विकासक नामक पाँचवीं क्रिया की स्थिति और क्रिया। इसमें ग्रीवा के पीछे गढ़ीले स्थान पर धारणा रखते हुए श्वास-प्रश्वास किया जा रहा है।

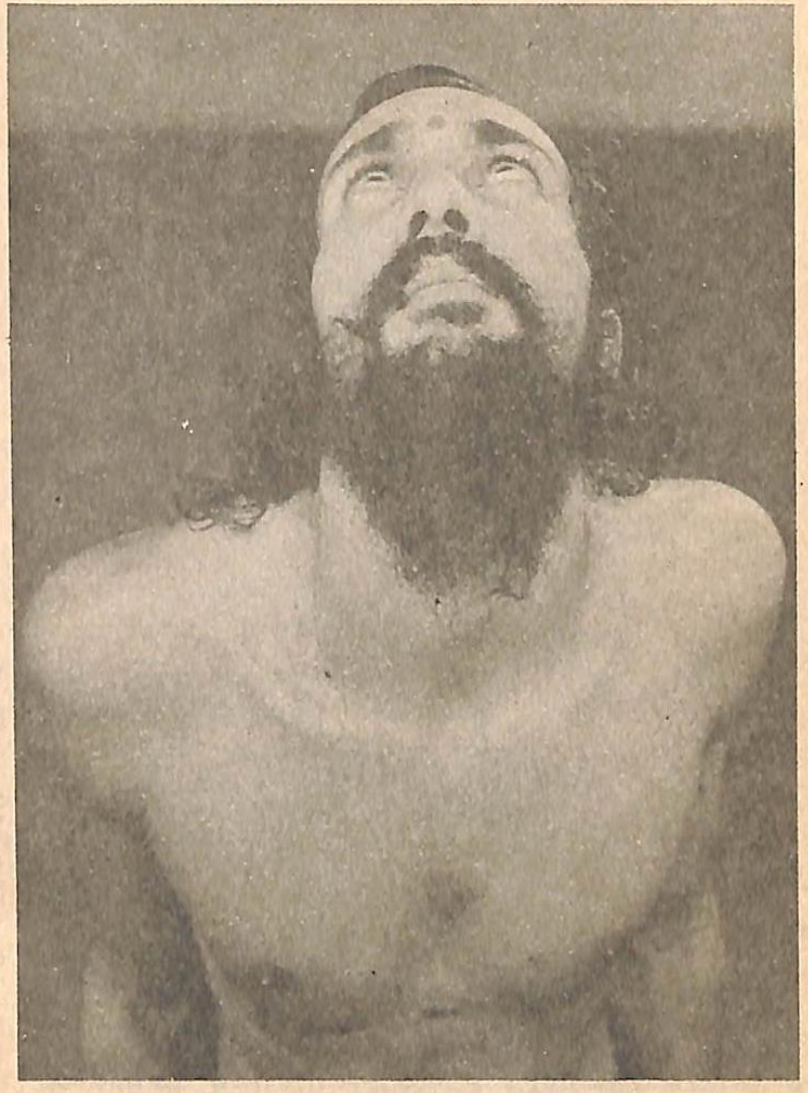

चित्र नं० ७ क्रिया नं० ६

नेत्रशक्ति-विकासक नामक छठी क्रिया की स्थिति और क्रिया। इसमें दोनों नेत्रों से भ्रूमध्य में निर्निमेष देखा जा रहा है।

से उपनेत्र (चश्मा) लगानेवालों को आयनक लगाने की आवश्यकता नहीं रहती तथा स्वाभाविक नेत्रदृष्टि प्राप्त होती है।

७—कपोल-शक्ति-वर्द्धक

स्थिति—पैर परस्पर मिले हुए हों, पैरों से स्कन्ध तक का विभाग सरलता से सीधा रखकर दोनों हाथों की आठों अँगुलियों के अग्रभाग को आपस में मिलाकर दोनों अँगूठों से दोनों नासिकारन्ध्रों को बन्द करके खड़े रहें। चित्र नं० ८ देखें।

क्रिया—मुख को कौवे की चोंच के सदृश बनाकर बाहर की वायु को सुर-सुर शब्द करते हुए बलपूर्वक अन्दर खींचें। श्वास खींचते समय दोनों नेत्र खुले रहने चाहिए। तत्पश्चात् गालों को पूर्ण फुलाकर नेत्रों को बन्द करके ठुड्डी कण्ठकूप से लगावें। यथा-साध्य कुम्भक करने के पश्चात् ग्रीवा को समावस्था में लाकर दोनों नेत्रों से सामने देखते हुए नासिकारन्ध्रों द्वारा अन्दर की वायु धीरे-धीरे बाहर निकालें। आरम्भिक क्रम ५ बार। चित्र नं० ९ देखें।

लाभ—इस क्रिया के अभ्यास से कपोलों पर लाली छा जाती है, किसी प्रकार के बाहरी सौन्दर्य-प्रसाधन की आवश्यकता नहीं रहती। दाँतों की पुष्टि होती है। पायरिया, पीप आदि मुख के सम्पूर्ण रोग दूर होते हैं। मुख से दुर्गन्ध आदि के दोष कुछ ही दिनों के अभ्यास से बिलकुल दूर हो जाते हैं। चेहरे पर अद्‌भुत कान्ति तथा आकर्षण आता है। पिचके तथा झुर्रियाँ पड़े गाल भर जाते हैं और उनकी स्वाभाविक अवस्था आ जाती है। कपोलों पर होनेवाले मुहाँसे, फुन्सियाँ इत्यादि का निकलना बन्द हो जाता है। योगशास्त्र के ग्रन्थों में इस क्रिया का विशिष्ट वर्णन है :—

काकचञ्चुवदास्येन पिवेद्वायुं शनैःशनैः।
काकी मुद्रा भवेदेषा सर्वरोगविनाशिनी॥

अर्थात्—अपने मुख को कौवे की चोंच के समान बनाकर धीरे-धीरे वायु को पीवें। इसे काकी मुद्रा कहते हैं। यह मुद्रा सभी रोगों को दूर करनेवाली है। और भी कहा है :—

काकी मुद्रा परा मुद्रा सर्वतन्त्रेषु गोपिता।
अस्याः प्रसादमात्रेण काकवन्नीरुजो भवेत्॥

अर्थात्—यह काकी मुद्रा बहुत उत्तम है और सब तन्त्रों में गुप्त है। इसके अभ्यास से मनुष्य काक की भाँति रोग-रहित और दीर्घायु हो जाता है।

प्रायः देखा जाता है कि गर्मी के मौसम में कौआ उड़ते-उड़ते जब प्यास से व्याकुल हो जाता है, तब चोंच खोलकर वायु पीने लगता है। इससे उसकी प्यास शान्त हो जाती है। इस प्रकार वायु पीने से अमृत के सूक्ष्म कण प्राप्त होते हैं, जिससे कौआ दीर्घायु हो जाता है। इसे यदि मनुष्य विधिपूर्वक करे, तो अनेक प्रकार के सिर-दर्द, मुख सूखना, पेट की गर्मी, नेत्रों के रोग, प्रमेह आदि दोष दूर होकर अपूर्व शक्ति प्राप्त होती है। सिर से लेकर मूलाधार तक सभी नाड़ियों को तरावट तथा शक्ति मिलती है।

८—कर्ण-शक्ति-विकासक

स्थिति—पैर परस्पर मिले हुए हों, पैरों से स्कन्ध तक का विभाग सरलता से सीधा रखकर खड़े रहें।

क्रिया—मुख बन्द करके दोनों अँगूठों से दोनों कर्णरन्ध्रों को बन्द करें। दोनों तर्जनी अँगुलियों से दोनों नेत्र बन्द करें। दोनों मध्यमा अँगुलियों से दोनों नासिकारन्ध्रों को बन्द करें। दोनों अनामिका तथा दोनों कनिष्ठिका अँगुलियों से मुख बन्द करें। फिर मुखको कौवे की चोंच के सदृश बनाकर (चित्र नं० १० की भाँति) बाहर की वायु को अन्दर खींचकर गाल फुलाते हुए जालन्धर बन्द लगावें। यथाशक्ति कुम्भक करने के बाद ग्रीवा को समावस्था में लाते हुए दोनों नेत्रों को खोलकर धीरे-धीरे अन्दर की वायु को बाहर निकालें। आरम्भिक क्रम ५ बार। चित्र नं० ११ देखें।

विशेष—कुम्भक के समय गाल पूर्णतया फूले रहेंगे।

लाभ—इस क्रिया के अभ्यास से कान में होनेवाले कर्णमूलादि समस्त रोगों की निवृत्ति होती है। श्रवण-शक्ति की वृद्धि एवं बहरापन दूर होता है और अविकसित कर्णरन्ध्रों की शक्तियाँ जागृत होती हैं। कहा भी है :—

श्रवणपुटनयनयुगलघ्राणमुखानां निरोधनं कार्यम्।
शुद्धसुषुम्णासरणौ स्फुटममलः श्रूयते नादः॥

अर्थात्—दोनों कान, दोनों नासिकारन्ध्रों, दोनों नेत्रों और मुखद्वार का निरोध करने पर सुषुम्णा का मार्ग शुद्ध हो जाता है तथा शुद्ध नाद सुनाई पड़ते हैं।

९—ग्रीवा-शक्ति-विकासक (१)

स्थिति—पैर परस्पर मिले हुए हों, पैरों से स्कन्ध तक का विभाग सरलता से सीधा रखकर खड़े रहें।

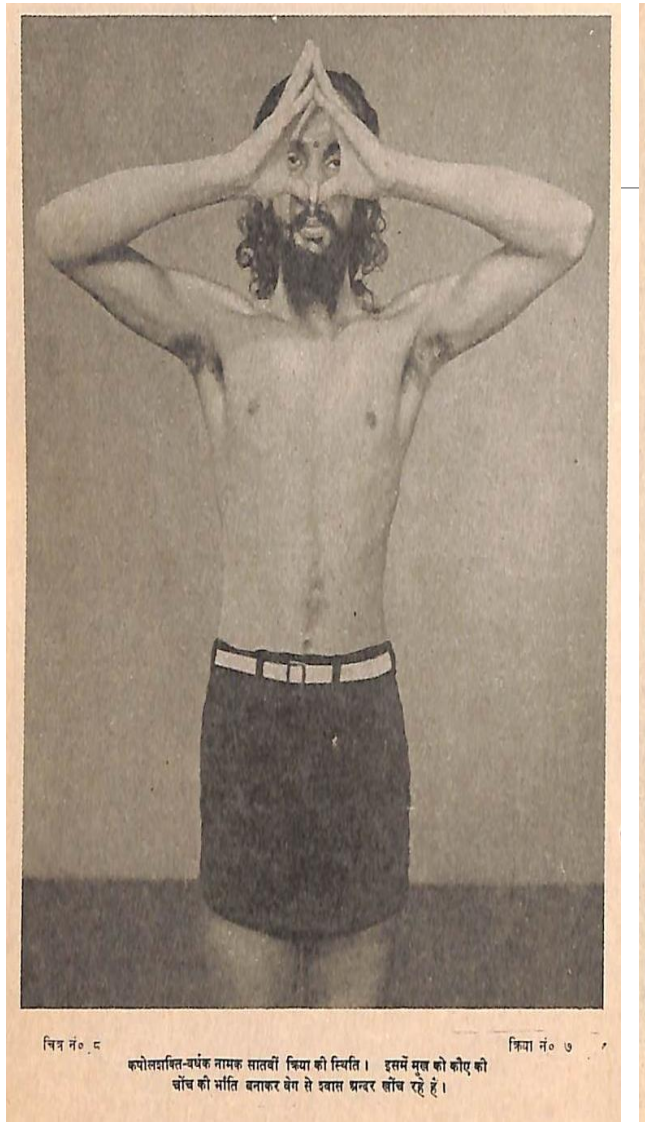

चित्र नं० ८ क्रिया नं० ७

कपोलशक्ति-वर्धक नामक सातवीं क्रिया की स्थिति। इसमें मुख को कौए की चोंच की भांति बनाकर वेग से श्वास अन्दर खींच रहे हैं।

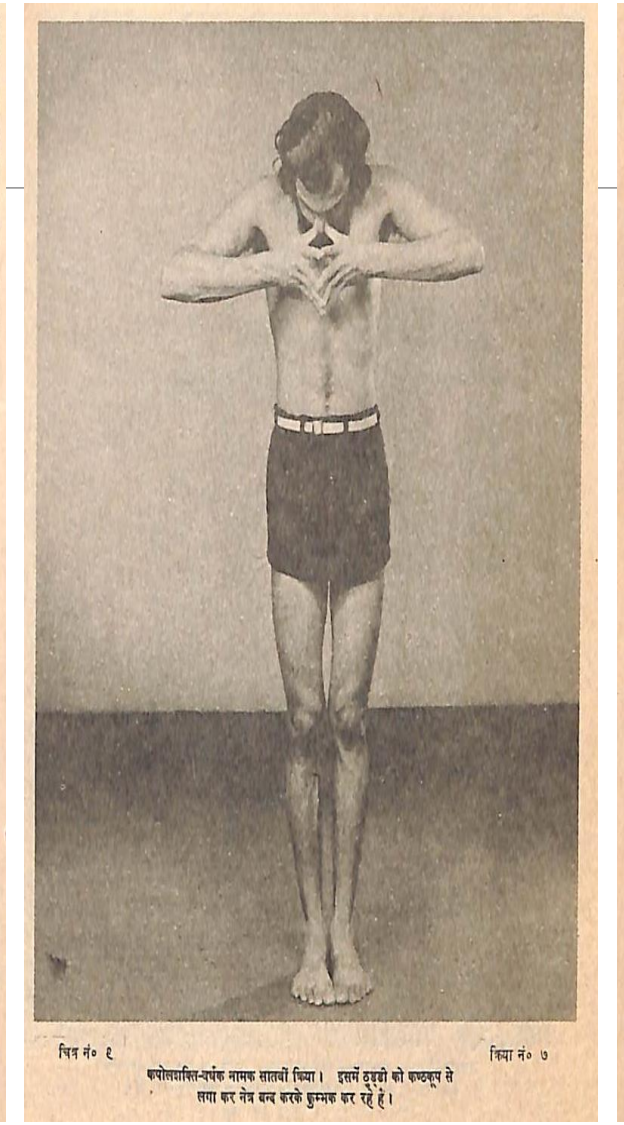

चित्र नं० ९ क्रिया नं० ७

कपोलशक्ति-वर्धक नामक सातवीं क्रिया। इसमें ठुड्डी को कण्ठकूप से लगा कर नेत्र बन्द करके कुम्भक कर रहे हैं।

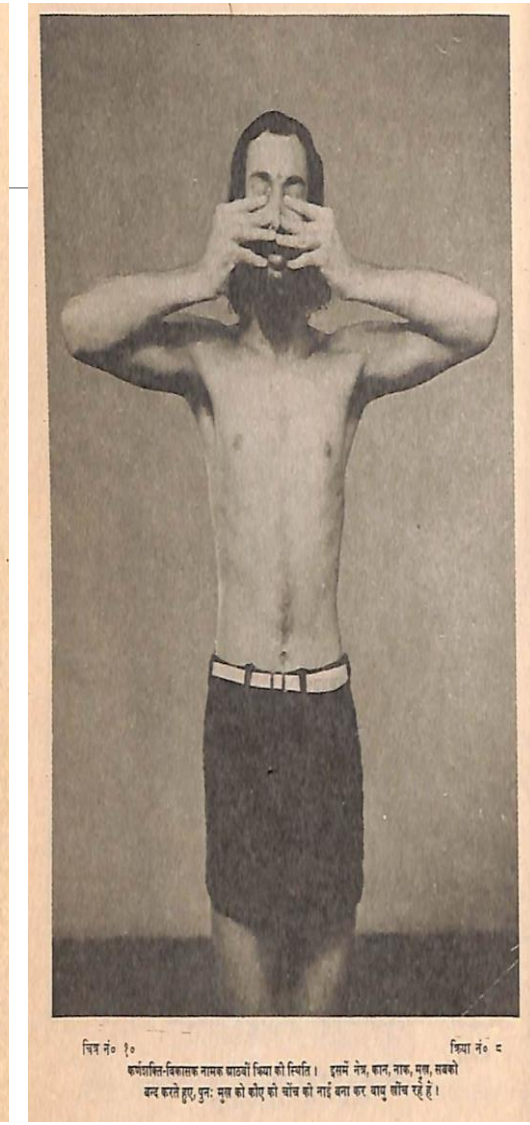

चित्र नं० १० क्रिया नं० ८

कर्णशक्ति-विकासक नामक आठवीं क्रिया की स्थिति। इसमें नेत्र, कान, नाक, मुख, सबको बन्द करते हुए, पुनः मुख को कौए की चोंच की नाईं बना कर वायु खींच रहे हैं।

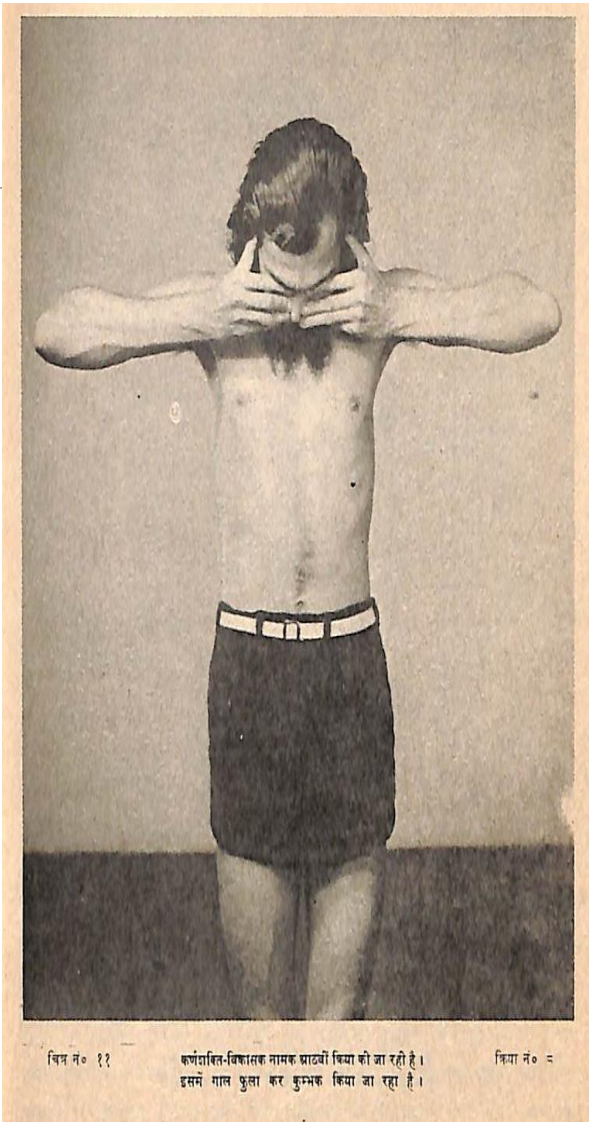

चित्र नं० ११ क्रिया नं० ८

कर्णशक्ति-विकासक नामक आठवीं क्रिया की जा रही है। इसमें गाल फुला कर कुम्भक किया जा रहा है।

The Bandhas

तीनों डायाफ्राम (श्रोणि, श्वसन और स्वर) (pelvic, respiratory, and vocal)

उज्जयी के साथ योग yoga movements

में एक साथ आते हैं जो साँस लेने और छोड़ने के साथ समन्वित होते हैं। सांस को अधिक लंबाई और बनावट देने के अलावा, उज्जयी का वाल्व पेट और वक्ष गुहाओं में एक तरह का बैक प्रेशर बनाता है। यह दबाव लंबे, धीमी गति और विस्तार movements के दौरान रीढ़ की रक्षा कर सकता है जो कि विनीसा (व्यवस्था या प्लेसमेंट) के श्वास-समकालिक प्रवाह अभ्यास में होते हैं, जैसे कि सूर्य नमस्कार के दौरान। योगिक शब्दों में, डायाफ्राम (बंध) की ये समन्वित क्रियाएं शरीर में अधिक स्थिरता (स्थिरता) पैदा करती हैं, इसे यांत्रिक तनाव को पुनर्वितरित करके चोट से बचाती हैं।

चित्र 1 दो दृष्टिकोणों से आगे की ओर झुकते हुए शरीर के यांत्रिक विश्लेषण को दर्शाता है। आकृति 1*(a)* में, हम धड़ को बिना सांस के सहारे के चलते हुए देखते हैं। क्योंकि गुहाओं के आस-पास की श्वास पेशी संलग्न नहीं है, आकार के लिए गुरुत्वाकर्षण का एक भी केंद्र नहीं है, और गुरुत्वाकर्षण का एक आंशिक केंद्र (B) लीवर (C) की लंबी भुजा पर कार्य कर रहा है, जिसका फुलक्रम बिंदु (A) लुंबोसैक्रल जंक्शन की कमजोर डिस्क पर है। धड़ के वजन को पश्च मांसलता द्वारा नियंत्रित किया जा रहा है, जो लीवर (D) के छोटे सिरे पर संकुचित रूप से कार्य करता है। शरीर सहज रूप से इस बेहद खराब उत्तोलन का विरोध करता है, और इसलिए हम अपनी रीढ़ की संरचनाओं को नुकसान पहुंचाने से बचने के लिए इस तरह की स्थितियों में अपनी सांस रोक कर रखते हैं।

Figure 1 Supporting a movement *(a)* without the breath and *(b)* with the breath.

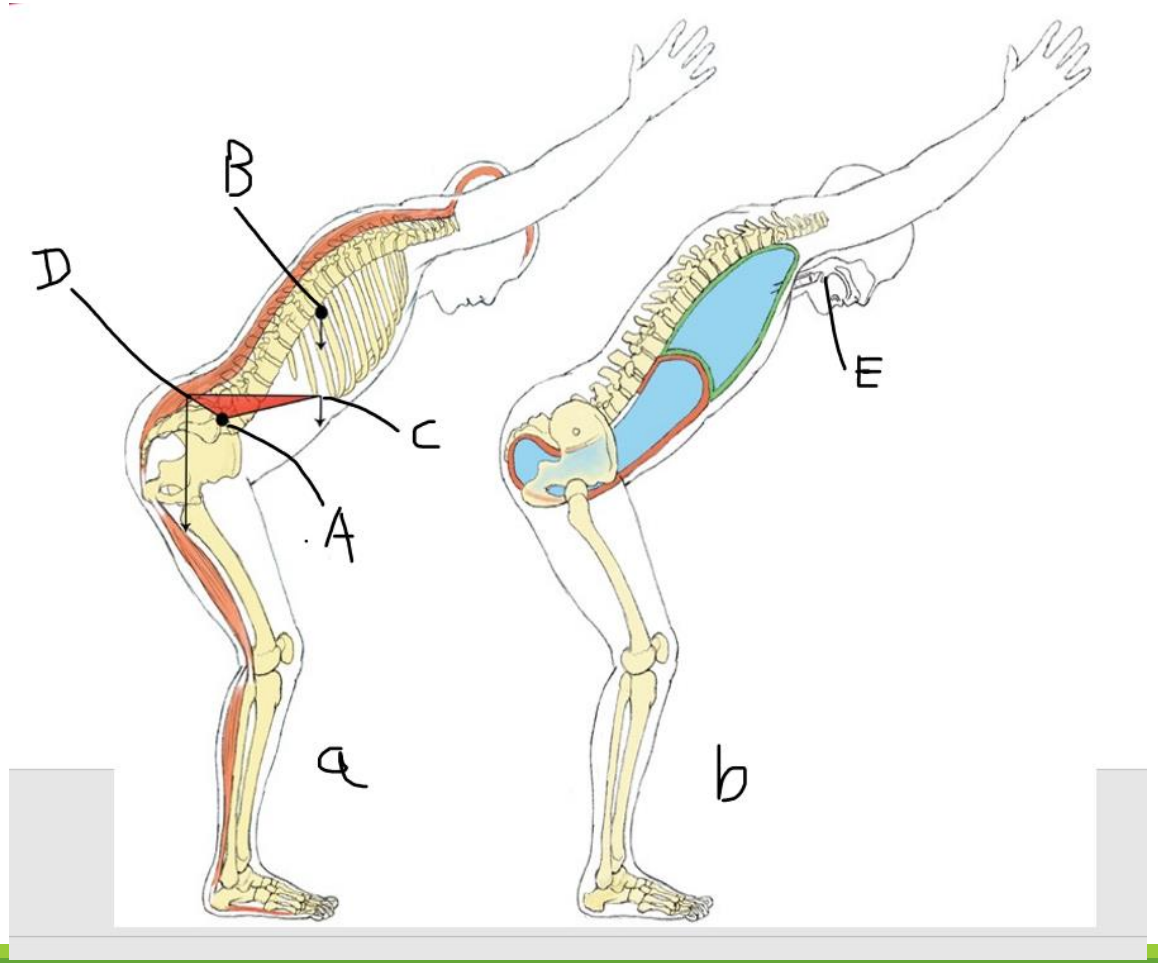

The Bandhas

चित्र 1.(b) उज्जयी (E) के ग्लोटल वाल्व को नियोजित करने वाले उसी movements को चित्रित करता है, जो स्वचालित रूप से श्वास की मांसपेशियों को संलग्न करता है। यह रीढ़ की पूरी पूर्वकाल सतह के साथ समर्थन बनाता है क्योंकि यह स्थिर शरीर के गुहाओं पर टिकी हुई है। शरीर में अब गुरुत्वाकर्षण का एकै ही केंद्र है, जिसे श्रोणि और पैरों द्वारा सुरक्षित रूप से सहारा दिया जा रहा है। इसे औमतौर पर ललाट समर्थन के रूप में जाना जाता है।

इस प्रकार के प्रतिरोध के माध्यम से शरीर को हिलाने और सहारा देने का एक अतिरिक्त प्रभाव प्रणाली में गर्मी का निर्माण होता है, जिसका उपयोग कई लाभकारी तरीकों से किया जा सकता है। इन प्रथाओं को ब्राह्मण (ब्रह अर्थ वृद्धि या विस्तार) के रूप में जाना जाता है, जिसका अर्थ है गर्मी, विस्तार, और शक्ति और शक्ति के विकास के साथ-साथ तनाव का सामना करने की क्षमता। ब्राह्मण को श्वास, पोषण, प्राण और छाती क्षेत्र से भी जोड़ा जाता है।

अधिक मुक्त, क्षैतिज, या पुनर्स्थापनात्मक प्रथाओं में शरीर को आराम देते समय, बंधों और ग्लोटल कसनाओं को दूर करना महत्वपूर्ण है जो लंबवत पोस्टुरल समर्थन से जुड़े होते हैं। योग का यह आराम पक्ष लंघन (अर्थात उपवास या भूख) की गुणवत्ता का प्रतीक है, जो ठंडक, संक्षेपण, विश्राम और मुक्ति के साथ-साथ संवेदनशीलता और आंतरिक ध्यान के विकास से जुड़ा है। लंघन को सांस छोड़ने, हटाने, अपान और उदर क्षेत्र से भी जोड़ा जाता है।

क्योंकि योग श्वास प्रशिक्षण का अंतिम लक्ष्य प्रणाली को आदतन, दुष्क्रियात्मक प्रतिबंधों से मुक्त करना है, सबसे पहले हमें इस विचार से मुक्त होने की आवश्यकता है कि सांस लेने का एक ही सही तरीका है। गुरुत्वाकर्षण के केंद्र का समर्थन करते समय और अंतरिक्ष के माध्यम से रीढ़ की हड्डी को स्थानांतरित करते समय बंधों के रूप में उपयोगी होते हैं, हमें लंघन का पीछा करते समय, विश्राम, और सुखा की रिहाई के दौरान प्रणाली की ब्राह्मण शक्तियों को छोड़ने की आवश्यकता होती है।

The Bandhas

आंतरिक संतुलन कई महत्वपूर्ण तंत्रों को संदर्भित करता है जो मानव धड़ को एक स्वावलंबी संरचना बनाने के लिए गठबंधन करते हैं, जिसमें ऊपर की ओर बढ़ने की एक अंतर्निहित प्रवृत्ति होती है।

इन तंत्रों में सबसे महत्वपूर्ण धड़ के आंत घटक में है - निचले पेट (उच्चतम दबाव), ऊपरी पेट (मध्य दबाव), और थोरैसिक स्पेस (निम्नतम दबाव) के बीच दबाव अंतर। चूंकि ऊर्जा हमेशा उच्च दबाव वाले क्षेत्र से कम दबाव वाले क्षेत्र की ओर पलायन करती है, इसका मतलब है कि पेट के निचले और ऊपरी हिस्से लगातार वक्ष स्थान की ओर ऊपर की ओर पलायन कर रहे हैं।

धड़ के बोनी घटक-रीढ़, रिब पिंजरे, और श्रोणि-सभी एक सामान्य विशेषता साझा करते हैं: वे यांत्रिक तनाव के तहत एक साथ बुने जाते हैं, जैसे लोचदार बैंड द्वारा नियंत्रित कंडलित स्प्रिंग्स। जब उरोस्थि को थोरैसिक सर्जरी के लिए विभाजित किया जाता है, तो दो हिस्सों में वसंत खुल जाता है और फिर से बंद होने के लिए एक साथ पीछे धकेलने की आवश्यकता होती है। श्रोणि के सामने, दो जघन रामी जघन सिम्फिसिस में शामिल हो जाते हैं, एक दबावयुक्त जोड़ जो नरम हो जाता है और बच्चे के जन्म में खुलता है और उम्मीद है कि बाद में फिर से जुड़ जाएगा।

रीढ़ की इंटरवर्टेब्रल डिस्क लगातार कशेरुक निकायों को अलग कर रही हैं - एक क्रिया जो रीढ़ के पीछे के स्तंभ के लिगामेंटस और बोनी संरचनाओं द्वारा विरोध की जाती है। बलों का यह संयुक्त धक्का-पुल रीढ़ की हड्डी के स्तंभ को पूरी तरह से एक बहुत ही वसंत संरचना बनाता है जो हमेशा तटस्थ पर लौटने का प्रयास करता है।

ध्यान दें कि शरीर की ये सभी विशेषताएं मांसपेशियों के संकचन से स्वतंत्र रूप से संचालित होती हैं- वास्तव में, यह हमारे आसन और श्वास की मांसपेशियों की अचेतन, अभ्यस्त गतिविधि है जो आंतरिक संतुलन के प्रभाव को बाधित करती है। इसलिए, गुरुत्वाकर्षण के लिए एक ईमानदार संबंध स्थापित करना, गहरे अर्थों में, सही पेशीय प्रयास करने के बारे में कम है, यह अभ्यस्त पेशीय प्रयास को खोजने और जारी करने के बारे में है जो शरीर की प्राकृतिक प्रवृत्ति को अपने दम पर समर्थन देने के लिए बाधित कर रहा है।

The Bandhas---निष्कर्ष

शरीर के संरचनात्मक समर्थन तंत्र के बारे में यह दृष्टिकोण पूरी तरह से पतंजलि द्वारा प्रस्तुत योग अभ्यास के परिप्रेक्ष्य के अनुरूप है। हम अपने तंत्र से क्लेशों की पहचान कर उन्हें दूर कर योग की प्राप्ति करते हैं।

निष्कर्ष

जब अनुवादित किया जाता है, तो शब्द प्राणायाम को आमतौर पर दो जड़ों में तोड़ दिया जाता है, प्राण, जिसका अर्थ है जीवन या सांस की ऊर्जा, और यम, जिसका अर्थ है संयम या नियंत्रण। क्योंकि श्वास केवल आंशिक रूप से हमारे स्वैच्छिक नियंत्रण में है, यह अनुवाद श्वास अभ्यास के बारे में बहुत सीमित दृष्टिकोण देता है।

शब्द की पूरी समझ तब उपलब्ध होती है जब दूसरे लंबे "आ" (प्राणायाम) को मान्यता दी जाती है। इसका अर्थ है कि दूसरी जड़ अयम है।

संस्कृत में, उपसर्ग a उसके पहले वाले शब्द का निषेध करता है। इसका मतलब है कि प्राणायाम एक ऐसी प्रक्रिया को संदर्भित करता है जो सांस को रोक देती है। यह सांस के उन पहलुओं का भी सम्मान करता है जो हमारे स्वैच्छिक नियंत्रण में नहीं हैं।

यही कारण है कि पतंजलि की क्रिया योग की परिभाषा इतनी खूबसूरती से इस विचार से जुड़ती है कि योग के गहनतम सिद्धांतों का हमारा सबसे अच्छा, सबसे अंतरंग रूप से उपलब्ध शिक्षक है।

इस प्रकाश में, यह स्पष्ट है कि सांस को अनियंत्रित करने के अभ्यास को हमारे सिस्टम के आंतरिक संतुलन की अभिव्यक्ति में बाधा डालने वाले शारीरिक तनावों की पहचान और रिलीज के समानार्थी के रूप में देखा जा सकता है।